chapter. 6

अध्याय : 6

व्यंग्यात्मक उपन्यासों का शिल्प एवं भाषिक-संरचना

अध्याय : 6

व्यंग्यात्मक उपन्यासों का शिल्प एवं भाषिक संरचना

शिल्प का सम्बन्ध उपनयास की कला, उसकी संगठन-विधि या क्राफ्ट्स (Crafts) से हैं । एक ही प्रकार की सामग्री से नाना प्रकार के व्यंजन, वस्तु या डिज़ाइनें बन सकती हैं; उसी प्रकार एक ही वस्तु को अलग-अलग रूप दिए जा सकते हैं । वस्तु के प्रस्तुतीकरण का यह ढंग - घटनाओं के क्रम को निश्चित करना, पात्रों एवं घटनाओं का चयन, आधिकारिक या मुख्य कथा के साथ अन्य प्रासंगिक या अवांतर कथाओं का समुचित नियोजन आदि - उपन्यास के शिल्प से सम्बन्ध रखता है ।

चूंकि उपन्यास का उद्देश्य मानव-जीवन की समग्र यथार्थताको पाठक तक सम्प्रेषित करना है, अत: पूर्वप्रयोजित कथा-विधियों या शिल्प उसकी सफलता में बाधक हो सकता है ; अत: अपने वस्तु को उपन्यस्त करने के लिए उपन्यासकार का कलाकार निरंतर किसी नये शिल्प की खोज में रहता है । परंतु एक बात यहाँ असंदिग्ध रूप से कही जा सकती है कि यह नवीन शिल्प वस्तु या कथ्य को उद्घाटित करने की अनिवार्य शर्त के रूप में आना चाहिए । पाठक को यह अहसास होना चाहिए कि यह वस्तु इससे अन्य किसी बेहतर ढंग से नहीं आ सकती थी । प्रयोग के लिए प्रयोग, या नवीनता के

व्यामोह में लाया गया शिल्प केवल चमत्कार की सृष्टि कर सकता है और केवल चमत्कार साहित्य या काव्य का काम्य कभी नहीं रहा ।

एक ही प्रकार की कथन-रीति में भी शिल्प के नये आयाम संगठित होते रहते हैं । कथा - प्रस्तुति की वर्णनात्मक या ऐतिहासिक शैली उपन्यास के प्रारंभ काल से चली आ रही है; परन्तु सेवासदन, रंगभूमि, गोदान, मैला आंचल, राग दरबारी, आपका बण्टी प्रभृति उपन्यासों में इसी एक ही विधि के अन्तर्गत शिल्प के कई नये आयामों को देखा जा सकता है । आजकल इसी वर्णनात्मक शैली के अंतर्गत रिपोर्ताज, संस्मरण, रेखाचित्र, डाक्यूमेण्टरी, दिवास्वप्न, पूर्वस्मृति, शब्दसहचयन प्रभृति नवीन टेकनीकों का प्रयोग हो रहा है ।

उपन्यास का रूपबन्ध भी शिल्पनिर्धारित करनेवाला एक महत्वपूर्ण घटक है । सामाजिक, ऐतिहासिक, मनोवैज्ञानिक, आंचलिक, व्यंग्यात्मक प्रभृति औपन्यासिक रूपबन्ध एक विविशष्ट शिल्प की मांग करते है । समाजवादी यथार्थवाद, अस्तित्ववाद आदि चिंतन-प्रणालियां भी शिल्प को एक विशेष रूप प्रदान करती हैं । तात्पर्य यह कि व्यंग्यात्मक उपन्यासों का शिल्प भी अपनी इसी व्यंग्यात्मक दृष्टि के प्राधान्य के कारण कुछ विशिष्टताएं लिए हुए रहता है । फण्टासी, शब्द-सह-चयन (Word association), पूर्वदीप्ति (Flash-back), कथा-प्रस्तुति की बहुस्तरीयता, हास्य-व्यंग्य की सृष्टि हेतु अवांतर कथाओं का प्रयोग जैसी शिल्पगत विशेषताएं यहां दृष्टिगोचर होती हैं । व्यंग्यात्मक उपन्यासों की भाषिक संरचना भी एक विशिष्ट "व्यंग्यात्मक टोन" में वृद्धि करनेवाली होती हैं ।

उसके प्रतीक, उपमान, मुहावरे, उक्तियाँ आदि सभी व्यंग्यात्मक तेवर लिए हुए रहते हैं ।

फण्टासी (Fantasy) :

इसका अंग्रेजी शब्द है "फैण्टसी" जिसे हिन्दी में फण्टासी आदि कहते हैं । आक्सफर्ड डिक्शनेरी में उसका अर्थ इस प्रकार दिया है :

'Image making faculty osp. when extravagant or visionary; mental image; fantastic design; Whimsical speculation"[1]

अत: अपने मूल अर्थ में इसे स्वैर-कल्पना, स्वप्न-चित्र, भ्रांति, मोह, सनक एवं मौज के पर्याय-रूप में लिया जाता है ।

जब कथाकार या लेखक अपने कथ्य को सीधी तरह से प्रस्तुत न कर कुछ नये-पुराने प्रतीकों, परम्परा में रूढ पात्रों - जो एक तरह से प्रतीक-से हो गए हों - द्वारा व्यक्त करता है तब वह फण्टासी का रूप धारण करता है । फण्टासी में चरित्र पूर्णत: यथार्थ नहीं होते, किन्तु उनका चित्रण कुछ इस प्रकार किया जाता है कि वे यथार्थ का भ्रम पैदा करते हैं और कभी-कभी तो यथार्थ को पूरी इमानदारी से व्यक्त करने की क्षमता रखते हैं । फंटासी में लोक-कल्पना का पूरा इस्तेमाल होने के कारण वह लोकजीवन के नाना रंगों को उभारने में सहायक होती है ।[2] श्री हरिशंकर परसाईने इस सम्बन्ध में लिखा है -- "लोक - कल्पना से दीर्घकालीन सम्पर्क और लोकमानस से परम्परागत संगति के कारण "फैंट" की व्यंजना प्रभावकारी होती है ।"[3]

इस सम्बन्ध में डॉ॰ शेरजंग गर्ग के निम्नलिखित विचार उल्लेखनीय रहेंगे -- "युग, परिवेश, साहित्य, समाज की विसंगतियों को तो फंतासी के माध्यम से अत्यन्त कौशल के साथ उभारना और भी सरल हो जाता है । विसंगतियों की अभिव्यक्ति के कारण उसमें व्यंग्य की उपस्थिति भी अपना कार्य करती है । यह आकस्मिक नहीं है कि व्यंग्य की अधिकांश सशक्त रचनाओं में फंतासी के माध्यम को अपनाया गया है और विसंगतियां खुद-ब-खुद उघड़ती चली गई हैं । यथार्थ स्थितियों और व्यक्तियों पर काल्पनिक चरित्रों के मुखौटे लगाकर युग की विसंगतियों का मुखौटा उतारने का काम "फंतासी" बखूबी कर सकती है, करती रही हैं । xxx वास्तव में "फंतासी" व्यंग्य को सम्प्रेषित करने का एक अत्यन्त सशक्त माध्यम है, जिसमें व्यंग्यकार समुचित स्वच्छन्दता बरतते हुए, संयत व्यवहार करते हुए व्यंग्य को उभारे तो वह स्थितियों और देशकाल के विद्रूप को अंकित करने में एक कलाकार की भूमिका को बेहतरीन ढंग से निभा सकता है ।"[4]

आलोच्य व्यंग्यात्मक उपन्यासों में "कथा-सूर्य की नयी यात्रा", ‌‌(एक चूहे की मौत", "रानी नागफनी की कहानी", "जंगलतंत्रम्" प्रभृति उपन्यासों में फन्टासी के शिल्प का उपयोग किया गया है ।

"कथा-साहित्य की नयी यात्रा" में यह कल्पना की गई है ।[5] कि एक नवोदित लेखक की आत्मा मरणोपरान्त स्वर्ग में जाकर कथा-सूर्य प्रेमचन्द की आत्मा से भेंट करती है । उस नवागंतुक आत्मा से प्रेरित होकर कथा-सूर्य प्रेमचन्द की आत्मा हिन्दी-साहित्य से सम्बन्धित कुछ स्थान-विशेषों की यात्रा करती है । इस प्रकार प्रस्तुत उपन्यास में हिन्दी साहित्य और हिन्दी जगत की साम्प्रतिक विसंगतियां -- गुटबन्दी, महन्ती दरबारों का

लगना, विचारहीनता, फतवेबाजी, हास्यास्पद प्रयोगवादिता, साहित्यिक चोरी (Plagiarism) -- को उकेरने के लिए लेखक श्री हिमांशु श्रीवास्तवने फन्टासी के तत्त्व का उपयोग किया है । "रानी नागफनी की कहानी" "एक था राजा" वाली शैली में प्रस्तुत एक प्रेम-कहानी है जिसमें परसाईजीने "फैशनी लवेरिया" के शिकार आधुनिक प्रेमी-युग्मों को अपने व्यंग्य का लक्ष्य बनाया है । "एक चूहे की मौत" में आधुनिक जीवन की इस विसंगति को सामने लाया गया है कि आज के युग में मनुष्य के लिये अपने रूचि के क्षेत्र का वरण लगभग असंभव है । हम सभी को विवशतावश आजीविका के लिए अपनी रूचि से भिन्न काम करना पड़ता है । यह एक प्रकार से "चूहे मारना" जैसा ही है । उपन्यास में चूहा "फाइल" का प्रतीक बनकर आया है । चूहों के साथ काम करते-करते उपन्यास का नायक "त" भी चूहे जैसा हो जाता है । एक ही अरूचिपूर्ण प्रकार का कार्य महीनों-बरसों करते रहने के कारण मनुष्य व्यक्तित्वहीन हो जाता है । अत: उपन्यास में किसी पात्र को नाम नहीं दिया गया है; "क", "त", "ग", "प" आदि से काम चलाया गया है । "जंगलतन्त्रम्" में स्वातंत्र्योत्तर पच्चीस वर्षों - सन् 1973 तक - की हमारी राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक विसंगतियों को नानी की पच्चीस रातों की पच्चीस कहानियों में व्यंजित किया गया है । पार्वती के वाहन सिंह, कार्तिकेय के वाहन मोर, गणेशजी के वाहन चूहे और शिवजी के नाग को शिवजी के कोप के कारण कैलास से निर्वासन मिलता है । उन्हें मृत्युलोक में जाना पड़ता है । वहाँ जाकर सिंह, नाग, और मोर की सहायता से "जंगलतंत्रम्" की स्थापना करता है । सिंह, मोर और नाग क्रमशः राजनेता, प्रशासक एवं पूंजीपति के प्रतीक है।

चूहा आम आदमी का प्रतीक है । नपुंसक, बिनपैंदे की लोटी-से बुद्धिजीवी वर्ग के लिए प्रति क्षण रंग बदलते गिरगिट का प्रतीक चुना गया है ।

लक्ष्मीकांत वर्मा के उपन्यास "टेराकोटा" में आज के जीवन की विसंगतियों के लिए "फन्टासी" का आंशिक प्रयोग किया गया है । "टेराकोटा" की कहानी तीन स्तरों पर चलती है, उसमें दो स्तरों की कहानी गौण है । मुख्य है तीसरे स्तर की आधुनिक जीवन की कहानी जिसे रोहित और मिति के माध्यम से कहा गया है । अन्य दो गौण स्तरों की कहानी में फैन्टेसी का प्रयोग हुआ है । एक में महाभारतोत्तर शांतिपर्व के पात्रों को लिया गया है तो दूसरी कथा में गणेश-व्यास आज की स्थितियों पर expert commentator के रूपमें लगभग बार-तेरह बार आए हैं । डॉ॰ विवेकीराय के शब्दों में -- "इस प्रकार आज के सन्दर्भों में मानवीय दृष्टि से देखी गई यह पौराणिक कहानी कहीं फैन्टसी के रूप में कहीं समानान्तर कथा के रूप में विकसित होती है ।"[6]

उपन्यास का प्रारंभ हस्तिनापुर की खुदाई में प्राप्त महाभारतोत्तर के कुछ अभिशप्त, क्षत - विक्षत, पात्रों की मृण्मूर्तियों से होता है । इस सम्बन्ध में उपन्यास का एक पात्र रोहित कहता है -- "आज भी दिल्ली में आदमी संत्रस्त है, टूटा है, क्षत-विक्षत है, पंग है । फर्क केवल इतना है कि आज की पंगुता मानसिक है और आज से पहले हस्तिनापुर की पंगुता कायिक थी ।"[7] प्रारंभिक "पुरावचन" में स्वयं वर्माजी लिखते हैं -- "ये अधूरे पात्र ही कलियुग की पूंजी है । इन्हीं के आधार पर कलियुग में कथाएं लिखी जाएंगी और उन्हें कोई कलियुग का लेखक ही लिखेगा ।"[8]

निष्कर्ष : कहा जा सकता है कि उक्त उपन्यासों में फंटासी के प्रयोग द्वारा व्यंग्य को अधिक धारदार, सूक्ष्म एवं पैना बनाया गया है ।

उपन्यास के उपशीर्षकों की व्यंग्यात्मकता

उपन्यास में व्यंग्यात्मकता की सृष्टि के लिए कई बार उसे नाना शीर्षकों में विभाजित किया जाता है । व्यंग्यात्मक उपन्यासों में आनेवाले यह शीर्षक भी व्यंग्यात्मक - छवि वाले होते हैं । इस दृष्टि से "कुरु कुरु स्वाहा" के शीर्षक उल्लेखनीय हैं -- "चलती का नाम चालू", एनो मीतिंग सूं, कृपया अपना नरक खुद तलाशें, भावनाओं का बाजारभाव, और फ्रायड को नींद आ गयी, तन्त्र का पेटिकोट में घुसो नका, मूंगफली भी अश्लील होती है आदि आदि । वस्तुत: "कुरु कुरु स्वाहा" में कथा-पिण्ड कहीं बनता-टिकता नज़र नहीं आता । अनेक विसंगत स्थितियों आड़ी-तिरछी ऐसे चलती है कि साम्प्रत जीवन की सारी अब्सर्डिटी प्रत्यक्ष हो जाती है । "मूंगफली भी अश्लील होती है" शीर्षक में संतृप्त पूंजीपतियों की व्यर्थ बहसों पर व्यंग्य करते हुए लेखक ने कहा है कि यह अमरीकन-कल्चर का प्रभाव है । वहां के लोग बोरियत मिटाने के लिए नित्य-नवीन नुस्खे इजार करते हैं । "इस मुद्दे को ध्यान में रखते हुए आयात-निर्यात का सिलसिला शुरू किया जाना चाहिए । यहां से एक अदद-बैलगाड़ी भिजवा दी, वहां से एक कैडलियक मंगवा लीं, समझे साहब, यहां से रविशंकर भेज दिये, वहां से मेनुहिन मंगवा लिये । यहां से एक बण्डल उपनिषद भिजवा दिये, वहां से कलामे - कीर्कगार्द मंगवा लिया ।"[9]

"नेताजी कहिन" के शीर्षक भी काफी व्यंग्यात्मक हैं, जैसे - सारा सवाल सही सइटिंग का हय, डफ-नेटली मोर गुड मेन, देस का थे होगा जनाबे आली, जीत मामा जीत, रहिमन सीट सायलेण्टली, हार्ट-पुटिंग कौसलपुर किंगा, फिरू लयवल हय हिन्दी साहित्त आदि । नेताजी बै सवाडी बोली का प्रयोग करते है, अत: अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग भी वे उसी ढंग से करते हैं । बुद्धिवादी निष्क्रिय भुनभुनाहट के लिए लेखक ने "फिरू" शब्द को कोइन किया है । उपन्यास के एक पात्र "कक्का" के साथ के निम्नलिखित संवादों में नेताजी ने हिन्दी साहित्य पर व्यंग्य किया है :-

नेताजी कक्का से पूछते हैं -- "अरे ये क्या पचड़ा लेइ के बइठ गये कक्का ! दफ्तर में कलम - घिसाई कम पड़ती हय ससुर ?" कक्का जवाब देते हैं -- "ऐसे ही अपना कुछ लिख रहे हैं । नेताजी उवाच -- "क्या लिखे हैं, सुनाय जाय तनि ।" कक्का -- "साहित्य-वाहित्य कुछ है ।" नेताजी -- "वाहित्ते होगा । अरे गोसाई तुलसीदास के बाद हिन्दी-भासी छेत्र में किसी ने साहित्त लिखा हो तो उसका नाम-पत्ता हमको बताइयेगा कबहूँ पुर्सत से ।" कक्का -- "किसीने कुछ नहीं लिखा तुम्हारे हिसाब से ।" नेताजीने हँसकर कहा -- "अरे लिखा ससुर इतना हय कि ओही में ओ के दफ्ना दिया जाई मउके से ! जो लिखा साहित्ते लिखा ससुर । गाली दिया, भंडास निकाला, रोना रोया, क्रान्त किया, सब ससुर कलम-कागजे से । वाकी यह समझ लिया जाय कक्का, तुम्हारा हिन्दी साहित्त फिरू लयवल है ।"[10]

Smt. ... RAJA BHAIYA ... LIBRARY

अशोक शुक्ल द्वारा लिखित "हड़ताल हरिकथा" के शीर्षक भी काफी व्यंग्यात्मक एवं रोचक है -- अस्थाना सस्पेन्शन खंड, चुनाव चौदस खण्ड, हड़ताल हुंकार खण्ड, कामरेड पटावन खण्ड, कोतवाल कौशल खंड आदि । इसी प्रकार "रानी नागफनी की कहानी" के शीर्षक भी उसके शिल्प के अनुरूप है, यथा -- फेल होना कुंअर अस्तमान का और और करना प्रेम की तैयारी, टूटना प्रेम राजकुमारी नागफनीका और करना तैयारी आत्महत्याकी, जलना विरह में और बहलाना मन तरह तरह से, आना जोगी प्रपंचगिरिका, होना शादी और रहना सुख से सबका आदि ।

तात्पर्य यह कि व्यंग्यात्मक उपन्यासों के शिल्प-संगठन में उसके शीर्षक - उपशीर्षकों का योगदान कम महत्वपूर्ण नहीं है ।

<u>शब्द सह चयन (Word association) :</u>

जहाँ उपन्यास में किसी घटना या चरित्र का उद्घाटन किसी शब्द के कारण होता है, वहाँ उसे शब्द-सहचयन की टेकनीक कहते हैं । वास्तविक जीवनमें भी कई बार ऐसा होता है कि कोई चीज हम भूल गये हैं, पर अचानक किसी दिन किसी शब्द के काम पड़ते ही वह हमें तुरंत याद आ जाती है । मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में इस टेकनीक का काफी प्रयोग मिलता है। कई बार तो किसी शब्द-विशेष के कारण एक लम्बा-चौड़ा सा फ्लैश बैक चल पड़ता है । कमलेश्वर के उपन्यास "आगामी अतीत" में कमल बोस के मुँह से "बच्ची" शब्द सुनकर चाँदनी एक दम बिदक पड़ती है और वहाँ से शुरु होता है घटनाओं का एक सिलसिला जो चाँदनी के वेश्या होने तक की स्थिति को स्पष्ट करते हैं । व्यंग्यात्मक उपन्यासों में शब्द सह चयन की टेकनीक के

द्वारा नाना क्षेत्रों की विसंगतियों पर व्यंग्य-बाण छोड़े जा सकते हैं। कहा गया है -- "ज्यों केलन के पात में पात पात में पात, त्यों पंडित की बातमें बात बातमें बात।" शब्दसहचयन में इसी प्रकार बातमें से बात निकाली जाती है।

"कथा-सूर्य की नयी यात्रा" में नवोदित मृत लेखक नमदीप की आत्मा से अचानक एक वाक्य निकल जाता है कि मेरा एक मित्र साहित्य का इन्सपेक्टर है। कथा-सूर्य प्रेमचन्द उसकी इस बात से चोंक उठते हैं, और नमदीप साहित्य के इन्सपेक्टर की व्याख्या प्रस्तुत करते हुए कहता है कि "जबसे हिन्दी साहित्यने एक नया मोड़ लिया है, तब से इस पद की उत्पत्ति हुई। ज्यादा गहराई में जाने की जरूरत नहीं, साधारण तौर पर यही समझ लीजिए कि हम लोक आलोचक को साहित्य का इन्सपेक्टर कहते हैं।"[11] इस पर प्रेमचन्दजी कुछ कुछ आश्वस्त होकर और पूछते हैं कि तब तो हिन्दी साहित्य में सब इन्सपेक्टर भी होते होगे। प्रेमचन्दजी की इस बात पर नमदीप कहता है -- "बात असल यह है कि जो आलोचक केवल पुस्तक का फ्लैप देखकर कोई फतवा दे दे, उसे हम लोग इन्सपेक्टर मानते हैं। जो किसी पुस्तक के बारे में अन्यत्र प्रकाशित समीक्षा देखकर अपनी कोई राय कायम कर लेता है, उसे हम लोग सब-इन्सपेक्टर मानते हैं। जो आलोचक किसी पुस्तक के कुछ भाग पढ़कर इधर-उधर कुछ गलत या सही राय व्यक्त करता है, उसे हम लोग असिस्टेण्ट सब-इन्सपेक्टर कहते हैं। हिन्दी-साहित्य में एल•सी• यानी लिट्रेट कांस्टेबुल की भी कमी नहीं। ये लोग पुस्तकें खरीद कर तो नहीं पढ़ते, मगर इन्सपेक्टर लोगों के नाम आई पुस्तके उनसे मांगकर ले जाते हैं,

पढ़ते हैं और अपने विचार सस्ते होटलों में, पान की दूकानों पर, मैदानों में मूंगफली खाते हुए व्यक्त करते हैं। साहित्य के सिपाही वे लोग हैं, जो साहित्य - इन्सपेक्टर की धाक लेखकों पर जमाते हैं। और आलोचना का क्षेत्र पसंद करनेवाले शेष लोग यही हवालदार, दफादार और चौकीदार हैं।"[12] आनंद से पुलकित होकर प्रेमचन्दजी पूछते हैं कि लोगों का काम क्या है ? उत्तर में नमदीप कहता है कि वस्तुत: ये लोग साहित्य के स्वयसेवक है और फिर इसी "स्वंयसेवक" की व्याख्या करते हुए बताता है -- "ये लोग साहित्यकारों के पिछलग्गू होते हैं। ये साहित्यकारों के सभी गुटों से अपना संपर्क बनाये रखते हैं। जब जिस गुट की मंडली में बैठते हैं, उसकी प्रशंसा करते हैं, सभी गुटों के साहित्यिक षडयंत्रों की सूचना सभी गुट के साहित्यकारों को दिया करते हैं। इसी ओराफेरी में ये बेचारे अपना कल्याण भी कर लेते हैं। x x x एक आध बाल-साहित्य प्रकाशित करा लेते हैं, कहीं पचास-साठ की नौकरी पा जाते हैं; और कुछ और तरीके से कमा लेते हैं। x x x विश्वविद्यालयों में लगे प्रोफेसरों के यहां प्रकाशकों की ओरसे पुस्तक मंजूर कराने के लिए दौड़ते - धूपते हैं। उसीमें कुछ पान=फूल पा जाते हैं बेचारे।"[13] इस पर प्रेमचन्दजी कहते हैं कि उनके जमाने में ऐसा नहीं था, जो जहाँ रहता था, चुपचाप अपना काम करता था। और इस बात पर प्रसन्नता व्यक्त करते हैं कि आजकल लोग संगठित होकर साहित्य-सेवा कर रहे हैं। प्रेमचन्दजी की इस बात पर नमदीप कहता है कि यह उनकी यथार्थवादी चेतना के कारण है और फिर यहाँ से इसी यथार्थवाद शब्द को लेकर लेखक इधर के साहित्य की खिंचाई करता है। यहाँ हास्य-व्यंग्य की

उत्पत्ति के लिए लेखक ने उपहास और बर्लेस्क का प्रयोग किया है ।

"राग दरबारी" उपन्यास में तो व्यंग्य-कथा कहने का यही शिल्प अनेक स्थलों पर मिलता है । छंगामल इण्टरमिजिएट कॉलेज के अध्यापक श्री मालवीयजी कॉलेज के उपप्रमुख गयादीनजी से प्रिंसिपल साहब के बारे में कुछ शिकायत करने जाते हैं । बातों के सिलसिले में उनके मुँह से निकल पड़ता है -- "गयादीनजी, मैं जानता हूँ कि इन बातों से हम मास्टरों का कोई मतलब नहीं x x x फिर भी यह संस्था है तो आप लोगों की ही ! उसमें खुले आम इतनी बेजा बातें हों ! नैतिकता का जहाँ नाम ही न हो !" मालवीयजी से "नैतिकता" शब्द सुनते ही गयादीनजी बोले - "नैतिकता का नाम न लो मास्टर साहब, किसीने सुन लिया तो चालान कर देगा । xxx नैतिकता समझ लो यह चौकी है । एक कोने में पड़ी है । सभा सोसाइटी के वक्त इस पर चादर बिछा दी जाती है । तब बड़ी बढ़िया दिखती है । इस पर चढ़ कर लेक्चर फटकार दिया जाता है । यह उसीके लिए है ।"[14]

इसी प्रकार एक स्थानपर "इन्यानियत" शब्द को लेकर लेखक गंजहों में "इन्सानियत" के जिक्र पर व्यंग्य कसते हैं --

"बद्रीने जम्हाई लेते हुए कहा, "प्रिंसिपलने गाली दी होगी । उसीके जवाब में (खन्ना ने) इन्सानियत की बात कही होगी । यह खन्ना इसी तरह बात करता है । साला बाँगड़ू है ।"

रंगनाथ ने कहा, "गाली का जवाब तो जूता है ।" बद्रीने इसका कोई उत्तर नहीं दिया । रंगनाथ ने फिर कहा, "मैं तो देख रहा हूँ, यह इंसानियत का जिक्र ही बेकार है ।"

बद्रीने सोने के लिए करवट बदल ली । गुड नाइट कहने की शैली में बोले, "सो तो ठीक । पर यहाँ जो भी क, ख, ग, घ, पढ़ लेता है, उर्दू भूँकने लगता है । बात-बात में इंसानियत - इंसानियत करता है ? कल्ले में जब बूता नहीं, तभी इंसानियत के लिए हुड़कता है ।" बात ठीक थी । शिवपाल गंज में इन दिनों इंसानियत का बोलबाला था । लौंड़े दोपहर को घनी अमराइयों में जुआ खेलते थे । जीतनेवाले जीतते थे, हारने वाले कहते थे, "यही तुम्हारी इंसानियत है ? जीतते ही तुम्हारा पेशाब उतर आता है । टरकने का बहाना ढूँढने लगते हो ।" कभी-कभी जीतनेवाला भी इंसानियत का प्रयोग करता था । वह कहता, "क्या इसीका नाम इंसानियत है ? एक दाँव हारने में ही पिलपिला गये । यहाँ चार दिन बाद हमारा एक दाँव लगा तो उसीमें हमारा पेशाब बन्द कर दोगे ?"

ताड़ीघर में मज़दूर लोग सर को दायें बायें हिलाते रहते । 1962 में भारत को चीन के विश्वासघात से जितना सदमा पहुँचा था, उसी तरह के सदमे का दृश्य पेश करते हुए वे कहते, "बुधुवा ने पक्का मकान बनवा डाला । कारखाने वालों के ठाठ है । हमने कहा, पाहुन आये हैं । ताड़ी के लिए दो रुपये निकाल दो, तो उसने सीधे बात नहीं की, पिछल्ला दिखा के चला गया । बताओ नगेसर, क्या यही इंसानियत है ?"[15]

यानी इंसानियत प्रयोग शिवपाल गंज में उस चुस्ती और चालाकी से होता था जिस तरह राजनीति में नैतिकता का । एक दिन वैद्यजी की बैठक में शिवपाल गंज के सब सेप्रमुख गंजहा ठाकुर दुरबीनसिंह का जिक्र चल पड़ता

है । उसी क्रम में "परोपकार" शब्द का प्रयोग होता है कि वे स्वभाव से बड़े परोपकारी थे । और यही से इस "परोपकार" शब्द को लेकर लेखक व्यंग्य की झड़ी लगा देता है -- "परोपकार एक व्यक्तिवादी धर्म है और उसके बारे में हर व्यक्ति की अपनी - अपनी धारणा होती है । कोई चींटियों को आटा खिलाता है, कोई अविवाहित प्रौढ़ाओं का मानसिक स्वास्थ्य ठीक रखने के लिए अपने मत्थे पर "प्रेम करने के लिए हमेशा तैयार" की तख्ती लगाकर घूमता है, कोई किसीको सीधे रिश्वत न लेनी पड़े रिश्वत देनेवालों से खुद सम्पर्क स्थापित करके दोनों पक्षों के बीच दिन-रात दौड़-धूप करता रहता हैं । ये सब परोपकार - सम्बन्धी व्यक्तिगत धारणाएँ हैं और दुरबीन सिंह की भी परोपकार के विषयमें अपनी धारणा थी ।"[16]

इसी प्रकार एक स्थान पर "लाइन" शब्द को लेकर लेखक व्यंग्य की सृष्टि करता है -- "लाइन"। शिवपालगंज में जनता को पढ़ाया गया था । लाइन प्रगति का नाम है । यही तरक्की है । हर काम लाइन से करो । लाइन से पेड़ लगाओं और उन्हें लाइन से सूख जाने दो । बस के टिकट के लिए लाइन में खड़े रहो और जब बस आ जाय और अपनी राह चली जाय तो दूसरी बस के इन्तज़ार में दस घण्टे लाइन में खड़े होकर मक्खियाँ मारो । जानवरों को लाइन में बाँधो, घूरे लाइन में डालों । जलसे में झंडियाँ लाइन से बाँधो, स्वागत गीत गवाने के लिए लड़कों को लाइन में खड़ा करो, गले में माला झोंकने के लिए लाइन से खड़े हो जाओ । सब-कुछ लाइन से करो । क्योंकि वह आँख से दिखती है और जो आँख से दिखती है, वही उन्नति है । इसके आगे देखने की और सोचने की तुम्हें जरूरत नहीं है क्योंकि उस काम के लिए दूसरे लोग है ।"[17]

"राग दरबारी" उपन्यास में ऐसे तो सैकड़ों स्थान है जहाँ व्यंग्य की सृष्टि के लिए लेखक ने इस टेकनीक का प्रयोग किया है। मनोहर श्याम जोशी के उपन्यास "नेताजी कहिन" के नेता कक्का के बच्चे आशिष के लिए टाफीका एक टीन उठा लाते हैं। इस सम्बन्ध में कक्का ने पूछा कि टाफी का इतना बड़ा टीन क्यों उठा लाये ? प्रत्युत्तर में नेताजी कहते हैं -- "वह एइसा हय, असीस हमें देखते ही कहिता हय, टउफी - टउफी ! सिकायत करता हय कि मामाजी जब भी आते हैं टउफी - कम्पट लाते हैं, आप लाते नहीं दद्दू। अब ससुर दुइ-चार टउफी जेब में डालकर लाना सब किरूँ लयवल हय। परसों चीन मिलवाला एक भगत आया सरन में, उससे हमने कहि दिया कि भिजवा दो चार कनस्तर अक्सपोर्ट कवाल्टी।" कक्का ने कहा कि "यह तो एक ही है।" "अरे बाकी भी आ-पहि लोगन के बच्चे खाय रहे होंगे।" नेताजी हँसे, "अपना तो आज भी वहीयै हय कि गुड़ की डली सबसे भली।" "अणी हाँ" (कक्का ने कहा) "पिस्ता-बर्फी तो और कोई खाता है न तुम्हारे मुँह से !" नेताजी हिनहिनाये, "एक ठो जनता का सेवक हय उस ससुरे के पेट में जाती हय बरफी - उरफी !" फिर उन्होंने सड़ी गर्मी को कोसा, "ईयर - कंडसनर" न लगाने के लिए हमें कोसा और किसी कैबरे - नर्तकी से भी अधिक कौशल प्रदर्शित करते हुए अपने कपड़े उतारने और तह करके रखने लगे। अन्त में कच्छा - जनेऊ, इस नेशनल ड्रेस में नेताजी दो बार सोफे पर कूदे और कुशनों का ऊँचा तकिया बनाकर लेट गये। बोले, "यह ससुर गुड़ की डली टाइप नाटक भी जरूरी हय समझे कक्का ! अखबार में खबर-फोटू छप जाता हय कि सी॰ एम॰ एक दिहाती की कुटिया में जायके गुड़ की डली ग्रहन कीन ! जब हमारे सियावर बाबू राज्य में मनस्टर थे,

तब एक मर्तबा में उन पर करप्सन चार्ज लगा । उन्होंने अखबारवालों को बुलाया लंच पर, समझे अउर मीनू रक्खा - छाछ सतुआ, प्याज - सतुआ, लिट्टी, भांटा का चोखा अउर नून-भात । गुरूने खुदने नमक - भात ही ग्रहन किया अउर बोले मन्द मुस्कुराकर, हम न तबहूँ नून-भात खात रहली हैं, अबहू नून-भात खात बानी । का समझे ! अरे इतना सिम्पली लिविंग वाला आदमी कइसे करप्ट हुई सकित हय !"[18] यहाँ यह समूचा प्रसंग "गुड़ की डली, सब से भली" से नि:सृत हुआ है ।

इसी प्रकार एक स्थान पर क्रिकेट की चर्चा चल पड़ती है । कक्का के यह कहने पर कि तुम-से कर्मठ व्यक्ति को वहाँ झख मारने क्यों जाना चाहिए ! इस पर नेताजी अपनी क्रिकेट - थ्यौरी समझाते हुए कहते हैं -- "अपना एइसा हय कक्का कि झख मारेंगे तो दयासे झखे बेच खायेंगे ! दुई-चार असामी वहाँ दर्सक - दीर्धा में मूँड लेइ आपका भतीजा । अउर फिर किर-कट देखेंगे तो कुछ सीखेंगे हि काम का । आप जानिए इ खेल अंग्रेजन का निकाला हुआ हय अउर अंग्रेजनहि से हमें पाल-मेण्ट डमो-क्रसी का खेल मिला हय । किर-करवाला लटका जउन नहिंन जानते तउन राजनीति के बिकट पर जम नहिं न पाते । अपोजसन इसीलिए तो मार खाता रहा हय । चउधरी चरनसिंह जिल्ला लयवल के गिल्ली - डण्डा पिलियर, टयस्ट मइच में उतार दिये गये तो अस्ट्रेट ड्राइवे मारा कि गेंद आयी अउर सामने की ओर छक्का, हुआ वही पीछे किलिन बोल्ड। अटलबिहारी बचक-फुटे पर खेले । मार दिया जाय या छोड़ दिया जाय सोचते रहे, मारा तो लेटकट अउर सीधा सिलिप के हाथ में । चन्द्रसेखर खेले हि नहीं, भारती राजनीत का बारहवाँ खिलाड़ी परमानण्ट ससुर । बहुगुना बहुधान्धी आलराउन्डर । उनसे कायदे

के दस ही खिलाड़ी नहीं जुट पाते कि टीम बना लें। दूसरी टीम में जाते हैं तो उन्हें गेंदबाजी का चांस नहीं दिया जाता अउर बच-टिंग में बहुत नीचे भेजा जाता हय। मोरारजी टुक-टुक करिते हय। कभी हाथ खोलते भी है तो इतने कायदे से कि गेंद वही हय जहाँ फिल्डर खड़ा हो। बाकी राजनारायन, जार्ज जइसे लप्पेबाज है।"[19]

जोशीजी के ही अन्य उपन्यास "कुरु कुरु स्वाहा" में भी इस शिल्प का प्रयोग कई बार हुआ है। उपन्यासका नायक " मैं " नायिका तारा झवेरी, लेखक के शब्दों में पहुँचेली, के सम्बन्ध में कहता है कि वह उसके लिए "आउट ऑफ कोर्स " थी और फिर इस शब्द को लेकर लेखक आगे कहता है -- " "आउट ऑफ कार्स" थ्योरी हबीब उल्लाह हास्टल, लखनऊ अनवस्टी में सन् 1949 में बन्ने मियाने प्रतिपादित की थी। इसमें कहा गया है कि जो ताल्वे - इलम इम्तहाने ज़िन्दगी में कोर्स और कोर्स में भी महज इम्पोटेंट - इम्पोटेंट का घोटा लगाते हैं, वही अव्वल दर्जे में पास हाते है। बन्नेमियां ने इस थ्योरी को इश्किया मामलों पर भी लागू किया था और बताया थाकि उन्हीं जवांमर्दों के बिस्तर गरम हो पाते हैं जो सबसे पहले यह देखते हैं कि कौन लुगाई मुकदर बनानेवाले ने अपने सिलेबस में रखी है, कौन नहीं? "आउट ऑफ कोर्स" लुगाई को पढ़ने में वक्त जाया होता है, नींद हराम होती है, सेहत खराब होती है, पैसा बरबाद होता है और सारी दौड़-धूप के बाद हाथ वही लगता है समझे, ना।"[20]

उसी प्रकार एक स्थान पर बुद्धिजीवियों की व्यर्थ बहसबाजियों को व्यंग्य का लक्ष्य बनाते हुए लेखक "बोर हुए पड़े हैं। थ्योरी की चर्चा छेड़

देते हैं । क्या है यह "बोर हुए पड़े है" थ्योरी ? लेखक के ही शब्दों में -- "लखनऊ काफी हाउस में सरदार त्रिलोचनने यह तजवीज की थी । इसके अनुसार पूरब, पूरब से बोर हुआ पड़ा है; पश्चिम, पश्चिम से; तो साहब पश्चिम के लिए पूरब एक दिलचस्प चीज है, पूरब के लिए पश्चिम । सरदार का ख्याल था कि मुद्दे को ध्यान में रखते हुए आयात-निर्यात का सिलसिला शुरू किया जाना चाहिए । यहाँ से एक अदद - बैलगाड़ी भिजवा दी, वहाँ से एक कैडलियक मँगवा ली, समझे साहब यहाँ से रविशंकर भेज दिये, वहाँ से मेनुहिन मँगवा लिये । यहाँ से एक बण्डल उपनिषद् भिजवा दिये, वहाँ से कलामे कीर्कगार्द मँगवा लिया । इसी थ्योरी के अनुसार भूख से बोर हुए पड़े भूखे, कभी भूख पर बहस नहीं करते । इन सालों का तो "टॉपिक फार टूनाइट" यही होता है कि इस साल खत्रियों के हियां शादी के बाद जूठन में जो कचौड़ियाँ फैंकी गयी थीं वह ज्यादा लजीज थीं कि परार के साल मन्दर में पूजा करके बाहमनों ने जो नुगदी बँटवाई थी सो ? ये तो खा-खाकर बोर हुए पड़े लोग हैं कि जिन्हें व्रत - उपवास मिरेकल डायर और वर्ल्ड हंगर डिस्कसियाने से फुर्सत नहीं मिलती ।"[21]

नागार्जुन के उपन्यास "इमरतिया" में इमरतीदास सधुआइन सोचती है : "मैं मस्तराम के साथ निकलूँगी । मुझे छोड़कर वह अकेले नहीं जा सकता । मैं उसकी राह देखूँगी । उसको मैं जमनिया के मठ में नहीं रहने दूँगी । हम दोनों इस नरक से साथ साथ छूटकारा पाएँगे ।"[22] इस "छुटकारा" शब्द के साथ ही उसे लक्ष्मी का विचार आता है -- "बेचारी

लक्ष्मी ! तूने जहर खाकर इस नरक से छुटकारा पाया था न ?"[23] इसके पश्चात उसके मनो-मस्तिष्क में लक्ष्मीवाली सारी घटना बिजली की तरह कौंध जाती है ।

अत: कहा जा सकता है कि व्यंग्यात्मक उपन्यासों में शब्द सह चयन के शिल्प का उपयोग प्राय: व्यंग्यात्मक स्थितियों को उभारने में होता है । इसे शब्दसह स्मृति भी कहते हैं ।

पूर्व - दीप्ति (Flash - back) :

आजकल बहुत से उपन्यासों में कथा प्रवाह सीधा न होकर अधोमुखी होता हैं । कथा पीछेसे आगे की और नहीं, आगे से पीछे की ओर जाती है । इस अधोमुखी कथा-प्रवाह की प्रणाली को कार्यान्वित करने के लिए जिन टेकनीकों का प्रयोग होता है इसमें पूर्व दीप्ति सर्वाधिक प्रचलित एवं लोकप्रिय है । इससे एक ही घटना पर पात्र के दोहरे मनोभावों का सरलता से अंकित किया जाता है । फ्लेश-बेक की सिनेमाई सफलताने उपन्यासकारों को भी इस दिशा में प्रेरित किया है और आधुनिक उपन्यासों में सर्वसाधारणत: इसे प्रयोग में लाया जा रहा है । उपन्यासों में इस टेकनीक को प्राय: तीन प्रकार से अंगीकृत किया गया है । एक तो समग्रतया, जहाँ कथा के प्रारंभ में इसे प्रयुक्त कर अन्त तक उसका निर्वाह होता है, दूसरे में आवश्यकतानुसार यत्र-तत्र इसका प्रयोग होता है । तीसरी विधि वह हैं जिसमें सम्पूर्ण तो नहीं परन्तु उपन्यास की कथा के एक बृहद् अंश के लिए इसका प्रयोग किया जाता है । यहाँ हम डॉ॰ धनराज मानधाने के इस मत से सहमत हो सकते है कि "सम्पूर्ण उपन्यास इस शैली में लिखना अस्वाभाविक-सा है लगता है । कारण

कितना ही कोई विद्वान हो अतीत का ज्यों का त्यों चित्र वह अपनी आँखों के सामने खड़ा नहीं कर सकता । और जिन्होंने प्रयत्न किए हैं उसे देखकर लगता है कि प्रारंभ और अन्त में इस शैली को लाकर दोनों के बीच अन्य शैलियों के सहारे ही उन्होंने अपना काम चलाया है ।"[24]

वस्तुत: मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में इसका प्रयोग अधिक होता है. । डॉ॰ राही मासूम रज़ा के उपन्यास "दिल एक सादा कागज" में "जैदी विला की भूत" और "दर्द की पहली लकीर" नामक दो प्रकरणों के बाद पृ॰ 45 के उपरान्त इस शैली को लिया गया है । वस्तुत: व्यंग्यात्मक उपन्यासों में शब्द सह समृति के द्वारा पूर्वदीप्ति के प्रयोग अधिक मिलते है । "इमरतिया" में "छुटकारा" शब्द के आते ही माई इमरतीदास" के सामने लक्ष्मी और उसके बच्चे वाली सारी घटना घूम जाता है । उसी प्रकार गौरी नामक सधुआइन का विचार आने पर उससे सम्बन्धित सारी घटनाएँ उसके स्मृतिपटल पर छा जाती है । गौरी साल में दो-तीन मर्द बदलती है । गरमाए हुए घोड़े को भी शांत करने की शक्ति उसमें है ।[25] रेणु के उपन्यास "जुलूस" में पाट के खेत में साग खोंटनेवाली औरतों को देखते ही जयराम को "कामदेव चौधरी बनाम मुड़ली मुसहरनी" वाले केस की याद आ जाती है क्योंकि मुड़ली मुसहरनी ऐसे ही अकेली पाट का साग तोड रही थी ।[26] राग दरबारी में "दूरबीनसिंह डकैत" तथा "राधेश्याम काने" की पूर्व-कथा फ्लेश-बैंक में बताई है ।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि व्यंग्यात्मक उपन्यासों में इस विधि का आंशिक प्रयोग ही अधिक मिलता है । अधिकांशत: शब्दसह स्मृति के द्वारा ही पूर्वदीप्ति को विकसित किया गया है ।

चेतनाप्रवाह शैली : मानव-मन की अतल गहराइयों में पहुंचकर उसके सही रूप को पकड़ने की चेष्टा इसमें होती है । कथा-प्रस्तुति की यह शैली प्राय: मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में अपनायी जाती है । व्यंग्यात्मक उपन्यासों में इसका आंशिक प्रयोग मिलता है । "सीमाएं टूटती हैं", "टेराकोटा", "इमरतिया", "मुरदाघर" प्रभृति उपन्यासों में इसकी कुछ झलक मिल जाती है । "इमरतिया" में "जमना मठ" के पतन के पश्चात भगौती (बाबू भगवतीप्रसाद) की मानसिक स्थितिको इसी शैली में उभारा गया है । भगौती के चरस-सेवन से स्थिति की यथार्थता और बढ़ गयी है : "मुंदी हुई पलकों के अन्दर, लगता है, ख्यालों के हुजूम थिरकने लगे हैं ...... लो पुलिसवाले आ धमके.... भगौती को उन्होंने गिरफ्तार कर लिया है .... हाथों में हथकड़ियाँ डालकर पुलिसवाले उन्हें हवालात की तरफ ले जा रहे हैं .... चौक होकर क्यों ले जा रहे हैं .... चौक में रस्तोगी ब्रदर्सवाली दूकान के सामने पुलिसवालों की रफ्तार धीमी हो गई है ...... दोनों सेठ भगौती पर थूकते हैं ...... छोटा फब्ती कसता है, साला हरामी ! पाकिस्तानी एजन्ट का दयाल ...... सुंशी का बच्चा .... वतन-फरोश कहीं का ..... हवालात के अन्दर मस्तराम पहले से मुस्कुराता है, फिर दांत पीसकर कहता है, आ गए बच्चू ? .... बाबा ठहाके लगाता है ..... फिर अंगूठा दिखलाता है ...... इमरतिया मर गई है .... गेरुआ कपड़ों से लाश ढकी है .... मस्तराम अकेले ही अबधूतिन की लाश को अपने कन्धों पर लादे मसान की तरफ जा रहा है .... मठ के खेतों में तैयार फसल की लूट मची है ..... भगौती के

बैलों को खोलकर लोगों ने भगा दिया है ..... जमनिया मठ के प्रवेश द्वार पर दूर से ही चमक रहा है "चन्द्रशेखर आज़ाद सैनिक शिक्षण शिविर"..... नजदीक से देखने पर छोटे अक्षरों में दीख रहा है ..... मुख्य अधिष्ठाता : स्वामी अभयानन्द .... दोनों कलाइयों में दस-दस घड़ियाँ हैं..... गले में घड़ियों की लम्बी माला लटक रही है ..... इर्द गिर्द ट्रान्ज़िस्टरों का अम्बार लगा है ।"[27]

उक्त उदाहरण से न केवल भगौती, अपितु बाबा, मस्तराम आदि के चरित्र तथा मठ की भ्रष्ट स्थिति पर भी प्रकाश पड़ता है । जगदम्बाप्रसाद दीक्षित के उपन्यास "मुरदाघर" में भी इस शैली का प्रयोग अनेक स्थानों पर हुआ है :

"हो रही है रात कचरे के ढेर पर । पागल आदमी .....ढूँढ रहा है अब भी ..... उसे जो नहीं मिलता..... रोशनियों के खंभे ...... रंडियों की कतार..... हँसती है ..... खिलखिलाती है बारबार ..... जोर लगाकर..... फब्तियाँ कसती हैं .... खाँसी नहीं रुकती....... एक झोंपड़ा..... अँधेरा कोना ..... पड़ी है मरियम..... दिन गिन रही हैं ...... कब निकलेगा पेट में से ? दूसरा झोंपड़ा ..... दूसरा अँधेरा कोना ..... बैठी है एक लड़की ...... डरी हुई..... कहाँ है मैना ?"[28]

बम्बई की झोंपड़पट्टियों में चल रहे सस्ते वेश्या-व्यापार की नारकीयता को चित्रित करने के लिए लेखक ने इस प्रकार की शैली को अंगीकृत किया है ।

कथा-प्रस्तुति की बहुस्तरीयता: साठोत्तरी उपन्यासों में शिल्प का यह आयाम अधिकांशतः मिलता है । कथा एक साथ अनेक स्तरों पर

चलती है । अमृतलाल नागर के उपन्यास "अमृत और विष" में कथा-दर-कथा के शिल्प को देखा जा सकता है । इसमें दो कथाएँ समानान्तर चलती हैं -- एक तो है उपन्यासकार अरविन्द शंकर की आत्मकथनात्मक कथा और दूसरी है उनके उपन्यास की कथा जो वे लिख रहे हैं । इस दूसरे कथा-खण्ड में युवा-वर्ग के संघर्षमय परिवेश का चित्रण है जिसमें वह रूढियों और परम्पराओं को तोड़ता हुआ उस ध्वस्त भूमि पर सहयोग व संवेदना की दीवार खड़ी करनेका प्रयास करता है । डॉ॰ कुँअरपालसिंह के शब्दों में -- "पैसे के बल पर खरीदी हुई पक्षधरता के साथ पूंजीपति वर्ग से टकराता हुआ अल्हड, अकेला, आवेशपूरित और सत्याकांक्षी नौजवान वर्ग इस दूसरी कथावस्तु का जीवन--प्राण है, जिसने उपन्यासको सार्थकता प्रदान की है । इस संघर्ष के बहादुर लडाकू हैं रमेश, लच्छू, हरि, दैलू, जयकिशोर और शामराव गोड़ बोले ।"[29]

भगवतीचरण वर्मा के उपन्यास "सबहि नचावत राम गोसाई" में कथापट के तीन स्तर मिलते हैं -- राधेश्याम : बुद्धि, जबरसिंह : भाग्य और रामलोचन पाण्डे : भावना । प्रथम तीन खण्डों में तीनों की अलग अलग कथाएँ चलती हैं और चौथे खण्ड में उन सभी पात्रों का परस्पर विनियोग होता है ।

"राग दरबारी" तथा "कुरु कुरु स्वाहा" जैसे उपन्यासों में कथा का कोई निश्चित स्वरूप नहीं है । प्रसंग-दर-प्रसंग शैली में कथा - व्यंग्य प्रवाह - आगे विकसित होती चलती है । "किस्सा नर्मदाबेन गंगूबाई" में भी कथा के दो स्तर मिलते हैं । एक है कल्लन उस्ताद और पोपट का, दूसरा है सेठानी नर्मदाबेन और गंगूबाई का । "टेराकोटा" में भी तीन कथाएँ समानांतर चलती है ।

"कुरु कुरु स्वाहा" में चरित्र की बहुस्तरीयता को भी उकेरा गया है । उपन्यासका नायक तिमंजिला है मनोहर, जोशीजी और मैं अनेक स्थानों पर एक ही घटना या चरित्र के सम्बन्ध में इनके तिहरे मनोभावों का चित्रण लेखक ने बखूबी किया है । एक उदाहरण दृष्टव्य है :-

"लेकिन यहाँ, चिरंजीवी भव ऐसे मनोहरने हरकाम उल्टा ही किया । उसने अपना मुँह उसकी छतनार छातियों में छिपाया । वह उसकी नरम-नरम गोद में सिर रखकर लेटा । xxx "विपरीत मैथुनस्त प्रद्युम्न सत्कामिन्त" छिन्नमस्ता स्तवन के इस फिक़रे से मैंने मनोहरको छेड़ना चाहा लेकिन वह उखड़ा नहीं, उल्टा उत्साहित हुआ । विपरीत मैथुन में संलग्न काम और चित्त की पीठिका पर कोटि-कोटि तरूण सूर्यो की तरह जगमगाती शिवा उसकी आराध्य बन चली । और आश्चर्य कि कोटि कोटि तरूण सूर्यों का स्मरण और त्रयोदशी के उस किंचित अपूर्ण चन्द्र का अवलोकन वह एक साथ, एक धरातल पर कर सका उस बेला । इधर सूर्य से चन्द्र तक की मन की यह छलांग उधर महायोनिचक्र के मध्य चलता व्यापार । xxx "मैं मरा जा रहा हूँ, टेढे गुलाब को यह बताने के लिए कि मेरी जवानी भी उसी शीत ज्वर से टूट-झुक गयी है । कवि डायलन टामस की यह पंक्ति मनोहर ने अब प्यारी प्यारी बेवकूफी - भरी बातों के खाते में उसे सुना दी । उसने उत्तर में मनोहर को झुमकर चूम लिया और फिर उस पर झूकी ही रही । क्या खुबसूरत शॉट था यह । वह चेहरा । वे स्तन । और वह चन्द्र त्रयोदशी का । कितनी भयंकर रूप से प्रीतिकर थी वह मन:स्थिति की साहब कर्कश किन्तुकान्त, सर्वानन्द के पयोनिधि, जिनसे

हर कामनापूर्ण होती है ऐसे, उन दीर्घ, ल — ब, सुमनोहर, सुमेरू युगल स्तनों से आच्छादित, दीर्घायु हो जो यह मनोहर नाम्नी बालक, पद्मो निधि सुमेरू के ऊपर उग आये, अपनी लनिस-सी अपूर्णता से कितने-कितने आकुल त्र्योदशी के उस किशोरचन्द्रका दर्शन करने लगा और अभी-अभी तक वधोद्धत योद्धा समान था जो ऐसा वह इस बालक का लोहित-नद, वैतालिक बनकर उसे लोरियाँ सुनाने लगा । "चुप बे नैमिषारण्य के ।" मैंने कहा, लेकिन जोशीजीने झिड़क दिया क्योंकि मनोहर के मानस में कुछ शब्द उभरने लगे थे जिन्हें जोशीजी कभी सुविधा से कविता का रूप दे सकते थे । "चाँद के नाम कई हैं, मगर मैं उसे किसी और ही नाम से जानता हूँ, तुम कहो तो आज तुम्हें भी बता दूँ । वह मनोहर के सिर पर अब असीसती अंगुलियाँ फेरने लगी । उस कृतज्ञ कविचेताने अपने नयन मूँद लिये x x x वह अबोध और जिसने अब अपनी कमजोर नजरवाली बड़ी-बड़ी आँखे खोली और पूछा, "तुम्हारा नाम क्या है ? xxx "नहीं बताती । अब कैसे जानोगे भला ?" बालकने आँखें फिर बन्द की और कहा, "अपने भीतर की खामोशी में स्वयं ही सुन लूँगा ।" xxx क्या बता रही है खामोशी । बालक मनोहर खामोशी के जीभ देने की समस्या से हतप्रभ हुआ लेकिन जोशीजीने बालक के मनमें थोडी देर पहले उभरी पंक्तियों जीवनोपयोगी साहित्यका दर्जा देते हुए कहा, "मेरी खामोशी कह रही है, उसके नाम कई हैं पर मैं उसे किसी और ही नाम से जानता हूँ, तुम कहो तो आज तुम्हें भी बता दूँ।" उसके गाल पर धरे वह फुसफुसायी, "बताओ न !" जोशीजी तमाम पौराणिक नाम ताबड़-तोड उलटने-पलटने लगे कि किसी सटीक संज्ञा से इसके अहम् को

संज्ञाहीन कर दिखायें । मैं इस सारे तमाशे से आजिज आ चुका था, लिहाजा मैं ने भावुकता के बुब्बारे में पिन चुभाने के लिए बाबू के दिये नाम से तुक बन्दी बनायी, "उसका नाम है पहुँचेली, वह है ...... ।"[30]

यहाँ कथानायक जोशीजी और नायिका तारा झवेरी के बीच हुए मैथुन - सम्बन्ध का एक चित्र है । जोशीजी के तीन रूप हैं -- मनोहर, जोशीजी और मैं । मनोहर इस सारे व्यापार में भावुकता से डूबता है, जोशीजी भी उसका भीतर भीतर जायका लेते हैं परंतु नायक का इंटेलेक्चुअल" "मैं" इस सारे व्यापार में तटस्थ ही नहीं रहता, बल्कि इसे एक सिरे-से नापसन्द करता है ।

इस प्रकार कथा-प्रस्तुति की यह बहुस्तरीयता इधर के उपन्यासों में विशेषत: दृष्टिगोचर होती है ।

अवांतर - प्रासंगिक कथाओंका नियोजन

नाटक में आनेवाली प्रकरी के समान उपन्यास में कई अवांतर या प्रासंगिक कथाओं को संयोजित किया जाता है । उपन्यास की पृष्टभूमि या परिवेश के निर्माण के लिए उनकी उपादेयता अपरिहार्य है । ये प्रासंगिक कथाएँ उपन्यास के तेवर व मुहावरे के अनुरूप होती हैं । व्यंग्यात्मक उपन्यासों का रूपबन्ध विशिष्ट प्रकार का होता है । व्यंग्य ही उनका एक मात्र लक्ष्य होता है । व्यंग्य की उद्भावक है विसंगतियाँ । अत: सामाजिक-राजनीतिक विसंगतियों को उकेरने में सहायक ऐसी कथाओंका विनियोजन व्यंग्यात्मक उपन्यासों में सविशेष रहता है । हास्य, उपहास, परिहास, बर्लेस्क आदि व्यंग्य के साधन हैं, अत: इन कथाओं में भी इनका होना स्वाभाविक है ।

"नदी फिर बह चली" के ग्रामीण परिवेश में अपने पति से छिपकर अच्छा खाना बनाकर खानेवाली सुगिया के सन्दर्भ में उसके चरित्र के अनुरूप एक हास्यकथा आयी है । एक किसान धनोपार्जन के लिए विदेश {बाहर} जाता है । वहाँसे कुछ रूपये वह प्रतिमास अपनी पत्नी के पास भेजता है । घरमें सास-ससुर, ननद-देवर कोई नहीं है । अत: वह दोनों जून खीर - पूड़ी बनाकर, परोसा लगाकर, पीढ़े पर बैठती और फिर आँख मूंदकर कहती -- "सास ना ननद घर अपने अनन्द, मटकाई ।" फिर वह स्वयं जवाब देती -- "मटकाई", और फिर खीरपूड़ी खाने लगती । पड़ोसन यह सब देखती थी । जब वह किसान लौटा तो संयोग से पहले पडोसिन से भेंट हो गई । उसने उसकी पत्नी की सब बातें बता दी । किसान अपने घर जाकर छिप गया । जब उसकी पत्नी हमेशा की तरह "मटकाई" कहकर खानेको उद्यत हुई तब किसान लाठी लेकर वहाँ पहुँच जाता है और कड़ककर बोलता है -- "सास ना ससुर, घर अपने असुर धबकाई ।"[31] और फिर लाठी लेकर पत्नी की धुलाई कर डालता है । ग्रामीणों के पास दैनिक जीवन-से संबंधित ऐसी अनेकों कहानियाँ होती हैं ।

"राग दरबारी" उपन्यास अपनी व्यंग्यात्मकता के लिए प्रसिद्ध हैं, अत: उसमें जो प्रासंगिक कथाएँ मिलती हैं, वे हास्य-व्यंग्यका पुट लिए हुए हैं । सनीचर द्वारा वर्णित दुरबीनसिंह डकैत की दोनों कहानियाँ हास्य रस की सृष्टि करती हैं । पहली कहानी में एक बार कुछ चोर-डकैत सनीचर को पकड़ लेते है । उसका सब माल - असवाब छीन लेते हैं, पर जाते समय कोई पूछ बैठता है कि कहाँ के हो । जवाब में सनीचर कहता है कि "गंजहा हूँ " फिर तो एक एक कर सब शिवपालगंज के मुखिया,

लम्बरदार और दुरबीनसिंह के बारे में पूछने लगते हैं । सनीचर ने जब कहा कि वह दुरबीनसिंह के बारे में पूछने लगते हैं । सनीचरने जब कहा कि वह दुरबीनसिंह की तरफ से लाठी भी चला चुका है तब सबको मानो साँप सूंघ जाता है और वे हाथ जोड़कर उसका सब सामान लौटाते हुए दुरबीनसिंह को न बताने के तरह-तरह से मिन्नतें करते हैं । दूसरे दिन सवेरा होते ही सनीचर ने दुरबीनसिंह के पैर पकड़ लिये और कहने लगा : " "काका तुम्हारे नाम में लाल लंगोटेवाला का जोर बोल रहा है । तुम्हारा नाम लेकर जान बचा पाया हूँ ।" दुरबीनसिंहने पाँव खींच लिये । बोले, "जा सनीचरा, कोई फिकिर नहीं । जब तक मैं हूँ, अँधेरे-उजेले में जहाँ मन हो वहाँ घूमा कर । किसीका डर नहीं है । साँप बिच्छू तू खुद ही निबटा ले, बाकी को हमारे लिए छोड़ दे ।"[32]

इसी दुरबीनसिंह की दूसरी कहानी भी बड़ी मजेदार है । सनीचर फिर एक बार पहलेवाली-सी स्थिति में फँस जाता है । उसका लंगोट तक वे लोग खुलवाते हैं । अंत में सनीचर कहता है : "बापू, तुम लोगों ने हमारी जान छोड़ दी, यह ठीक ही किया है । माल ले लिया तो ले लिया, उसकी फिकिर नहीं । हम भी तुमको बता दें कि तुम नमक-से-नमक खा रहे हो । तुम हो सरकार के, तो हम भी हैं दरबार के ।"[33] और फिर दुरबीनसिंह का जिक्र छेड़ देता है । दुरबीनसिंह का नाम सुनकर वे खूब तो खिल्ली उड़ाते हैं और फिर उनका सरदार हाथ में तमंचा लिए हुए कहता है : "देख लो बेटा, यही है छः गोलीवाला हथियार । देसी कारतूसी तमंचा नहीं, असली बिलायती । xxx जाकर बता देना

अपने बाप को । अन्धों में काना राजा बनने के दिन लद गए । अब वे खटिया पर पड़ें रहें । कभी अँधेरे-उजेले में दिख गए तो खोपड़ी का गूदा निकल जाएगा । समझ गए बेटा फ़कीरेदास !"[34] और सही ठाकुर दुरबीनसिंह अपने नशेबाज भतीजे का ज़ोरदार तमाचा खाकर कुएँ की जगत से ऐसे गिरे कि रीढ़ टूट गयी । "कुछ दिनों तक कोने में रखी हुई अपनी लाठी को देख देखकर दुरबीनसिंह अपने भतीजे के मुंह में उसे ठूँस देने का संकल्प करते रहे और अंत में लाठी और भतीजे के मुंह को यथावत् छोड़कर वे शिवपालगंज की मिट्टी को वीरविहीन बनाते हुए वीरगति को प्राप्त हुए यानी " टें " हो गये ।"[35]

आधुनिक चुनाव संहिता के तीन फार्मूलेवाली तीन कहानियाँ -- रामनगरवाली - नेवादावाली और महिपालपुरवाली - चुनाव के आधुनिक हथकण्डों को उद्घाटित करती हैं जिनमें प्रथम में दंगा-फसाद के द्वारा, दूसरी में साधु-महात्मा को बीच में लाकर तथा तीसरी में अधिकारियों को अपने पक्ष में मिलाकर चुनाव जीते कहानी भी बड़ी व्यंग्यात्मक है । एक नवाब साहब का शाहजादा जब किसी प्रकार ठीक नहीं हुआ तो अंतमें एक बुजुर्ग हकीम एकान्त में बेगम साहिबा से पूछते हैं : "देखिये बेगम साहिबा, अगर शाहजादे की जान प्यारी हो तो साफ़-साफ़ बताइए, यह शाहजादा किसका लड़का है ? किसके नुत्फे से पैदा हुआ है ?"[37] बेगम साहिबा आँसू बहाते हुए कहती हैं : "किसीसे कहियेगा नहीं । पर असलियत यही है कि शाहजादा महल में काम करनेवाले एक भिश्ती का लड़का है । मुआ ताज़ा दीहात से आया था और मालूम नहीं कैसे क्या हुआ कि ...."[38] इतना सुनते ही हकीम साहब ने शाहज़ादे की

आँखो पर परनी के छींटे मारे और कहा, अबे उठ। भिश्ती की औलाद।"[39] बस चौंककर शाहजादे ने आँखे खोल दी। उसके बाद हकीम साहब ने मैदान में जाकर कौड़िल्ला के कुछ पौधे उखाड़े और उन्हें पानी में पीसकर शाहजादे को पिला दिया। तीन दिन तक इसी तरह कौड़िल्ला पीकर शाहजादा चंगा हो गया।[40]

"नेताजी कहिन" के नेताजी कक्का से एक कहानी कहते हैं -- तसलुवा तौर के मोर ? कहानी इस प्रकार है :-

"तसला तेरा कि मेरा ? इसीका हय सारा फलसफे का खेल समझे। वही अह्म-वह्म जो आप कहि रहे थे। इसमें एइसा हय कि "डाकू लोग ससुरे घुस जायं गाडी के कम्पाट में अउर पूछे पसिंजर से -- तस-लुआ तोर के मोर ? अब ये माल-मत्ता जो तू रखे हय, तेरा हय कि मेरा ? अगर पसिंजर गियानी हो तो कहि ये, तौर हो मालिक। अरे जब सब उसी ऊपरवाले का खेल हय तो तेरा - मेरा कइसा। गियानी टाइप पसिंजर को डाकू आधा मालमत्ता लेय के छोड़ दे और असी से कि फूलाफला, कमाते लुटवाते रहा। मूरख पसिंजर, अह्म का मारा ससुरा कहि दे : ए तसलुवा मोर हो। कहि दिहिन ते डकुवा दुई रहपर देई के मालमत्ता लेइ के चम्पत हुई जाय। समझे कक्का "मेराहय" जो मूरख एइसा कहता हय उसका मालमत्ता पूरा का पूरा जाता हय अउर दो झापड़ ससुर ऊपर से पड़ते हैं। इस पाइण्ड को आप पकड़ियेगा तो जनता जनार्दन को ऊँचा फलसफा समझमें आ जायेगा मानउ जीवन का।"[41]

ऐसी ही एक व्यंग्य-कथा में हिन्दी भाषी राज्य के सी•एम• पर अच्छा - खासा व्यंग्य किया गया है :- "वह एइसा था कि एक कुत्ते पर किसी बाम्हन ने दे मारा डण्डा । कुत्तेने भगवान की अदालत में अर्जी लगायी । बाम्हन ने भगवान से कहा कि मैं सुबह नहा-धोकर आपके मन्दिर में जा रहा था कि यह कुत्ता मुझ पर झपटा । असुद्ध न हुई जाउं यह सोचकर मैंने डण्डा मारकर इसे भगाया । भगवान उस कुत्ता से कहिन कि डण्डी मारकर बाम्हन अपराध किया है, नो डाउट लेकिन इसको सजा हम क्या दूँ, कइसे दूँ । एक तो इसके पास भी पाइण्ट था तगड़ा तुम्हें मारने का, दूसरे यह बाम्हन हय । तब कुत्ता कहिन के प्रभो मैं आपको सुझाता हूँ एइसी सजा जो आप इस स्रेष्ट व्यक्त को देइ सकिते हैं -- इसे आप किसी हिन्दी भासी राजका सी•यम• बनाय के भेज दो । मै सी•यम• बनाय के भेज दो । मैं सी• यम• रह चुका हूँ, भगवान आपकी दया से । भच्छा-भच्छा का विचार न करके के कारण स्वान-योन मिली इय मुझको अउर मैं आपसे सही बताता हूँ माई लाड कि हिन्दी भासी राज का मुख्यमंत्री होना जीते जी नरक देखना हय । अपनी बड़ी, जे हे ने से, अपनी टाइम प्रिकरिंग टू वी कुत्ता दयन सी•यम• हिन्दी अस्टेट ।"[42]

तात्पर्य यह कि व्यंग्यात्मक उपन्यासों में उनकी व्यंग्यात्मक मुद्रा के कारण आनेवाली प्रासंगिक कथाएं भी उसके उसी रूपबन्ध के अनुरूप तथा उनकी उस पृष्ठभूमि को परिपोषित करनेवाली होती हैं ।

भाषिक - संरचना :

पूर्व विवेचन में यह निर्दिष्ट हो चुका है कि उपन्यास भाषा की कला है । उपन्यास के रचना-संविधान में भाषा का महत्व अक्षुण्ण है । वस्तु, चरित्र, परिवेश एवं उपन्यास के रूपबन्ध को निर्दिष्ट करने में भाषा

का योगदान असंदिग्ध माना जायेगा । यही कारण है कि एक ही लेखक के दो उपन्यासों में भाषा के भिन्न स्तर मिलते हैं यदि उनकी शिल्प-संरचना में अंतर है, यथा -- "आधा गाँव" और "दिल एक सादा कागज" (डॉ॰ राही मासूम रज़ा); "राग दरबारी" और "आदमी का जहर" (श्रीलाल शुक्ल); "मित्रो मरजानी" और "सूरजमुखी अन्धेरे के" (कृष्णा सोबती); "नेताजी कहिन" और "कुरु कुरु स्वाहा" ।

"राग दरबारी" व्यंग्यात्मक उपन्यास है, अत: उसकी भाषिक-संरचना हास्य-व्यंग्य के तेवरों से भरपूर है । अनेक स्थानों पर उसमें परंपरा से प्रचलित शब्दों को व्यंग्य - विदग्धता से प्रस्तुत किया गया है , उदाहरणार्थ "भरत मिलाप" शब्द का प्रयोग यहाँ "माराकाटी" के रूप में हुआ है -- (1) "मास्टर साहब, जाँच-बाँच से कुछ नहीं होता । सीधा रास्ता वही है । आप हुकुमदें तो किसी दिन यहीं अँधेरे - उजेले में प्रिंसिपल साहब का भरत-मिलाप करा दिया जाय ।"[43] (2) डिप्टी डायरेक्टर न मानें और जाँच करने आयें तो उनका भी किसीसे भरतमिलाप करा देंगें ।"[44] उसमें प्रयुक्त कहावत - मुहावरें भी हास्य-व्यंग्य की ध्वनि को पुष्ट करनेवाले हैं -- "शहर का आदमी है । सुअर का - सा लेंड -- न लीपने के काम आये न जलाने के ।"[45] एक स्थान पर कुस्हरप्रसाद सनीचर के सम्बन्ध में कहता है -- "कल के जोगी। चूतड़ तक जटा । सनीचर को देखो, देखते - देखते मंगलप्रसाद बन गये ।"[46]

"कुरु कुरु स्वाहा" बम्बई के फिल्मी-परिवेश पर आधारित एक व्यंग्य उपन्यास है । उसमें हमारे समाज और साहित्य पर कई व्यंग्य है । अत: उसका भाषिक-रचाव भी व्यंग्य - वैदग्ध्य से परिपूर्ण है । बम्बइया हिन्दी

के प्रयोग के कारण उसमें हिन्दी, गुजराती, पंजाबी आदि कई भाषा के शब्द मिलते है -- "मदत पाहिजे", "तफरी होने का! ", अब्बी किसका साथ बैठा नहीं", टैम, "सिस्टर चालू हो कि नहीं ?" "नवा कोच्छ नहीं", "ओस माया तेरी का प्रभाव", "फसावड़ा", पैला चूतड़ों पे राख मली ने आओ जो आदि ।[47]

इस व्यंग्य-सृष्टि के लिए कहीं-कहीं पर लेखक ने संस्कृत और अंग्रेजी के शब्दों का प्रयोग भी किया है -- श्वेतकेशा, संरक्षिका, गुर्जर-सुन्दरी, स्वर-साधिका, आर्यपुत्रियां, नर-पुंगव, भगिनी-भंजक, सायं-स्मरणीय, कुक्कुट-पुच्छिकाओं, अनुष्ठानबद्ध सेक्स, त्रयोदशी का चन्द्रमा, शुचिना-सन्धान आदि ।[48] अंग्रेजी शब्दों का संस्कृतीकरण या हिन्दीकरण या भाषाई मिश्रण भी अनेक स्थानों पर मिलता है, यथा -- अनवर्स्टी, ईंटेलेक्चुअलता, जिस्मे-जीनियस, डायलोगबाजी, अंक्ली, फ्राडमालिन्यै नमः, देवी-काम्प्लेक्स, बायलौजीकी हाम्योपैथिक डोज़, नर्वसाय जाना, इलियटावतार, जौलीगुड होलीगुड, बलियाटीक भावुकता, डिस्क सियाना आदि ।[49]

"नेताजी कहिन" भाषायी व्यंग्य का एक उत्तम उदाहरण है । उसमें प्रयुक्त बैसवाड़ी - अंग्रेजी हास्य-व्यंग्य की सृष्टि करते हैं -- सइटिंग (सेटिंग), उफनेटली (डेफीनेटली), बियूटी (ब्यूटी), मिक्स इकोन्मी (मिक्स इकानिामी), अनर्जी (एनर्जी), अजटेसन (एजिटेशन), अटमासफीअर (एटमोसफीयर) फ्रण्डली (फ्रैंडली), लयवल (लेवल), अक्स्पोट क्वोल्टी (एक्सपोर्ट कालिटी), बयकवर्ड एर-याज (बेकवर्ड एरियाज़) , कम्पाट (कम्पार्ट मेण्ट), फिरी फण्ड (फ्री-फण्ड), फस्सकलास (फर्स्टक्लास), मयडम (मेडम), सी-यम (सी·एम·), अस्कोप (स्कोप), किर-किट (क्रिकेट), पाल-मेण्ट (पार्लियामेन्ट),

बयक-फुटे (बेक"फुट से), अवसलण्टीय (एक्सलेन्सी), अयनी बडी (एनीबडी) आदि ।[50]

नेताजी की भाषामें भी बैसवाडी समाजवादी मिलता है । "श" और "ष" के स्थान पर वे "स" का ही प्रयोग करते हैं, जैसे - बिसेस, इण्टरनेसनल, उत्पादनसीलता, सिकायत, हिन्दीभासी आदि । ऐसे तो सैकडों शब्द मिल सकते हैं ।[51] अंग्रेजी ही नही, हिन्दी के भी कई शब्दों का उद्धार उन्होने कर दिया है -- देवशना, साम्प्रदायकता, साहित्य, सरन, ग्रन्था उली, अस्तमाल, छिक्छाप्रद आदि ।[52]

पूर्व-विवेचन में यह निर्दिष्ट किया जा चुका है कि व्यंग्यात्मक उपन्यासों के शीर्षक भी व्यंग्यात्मकता लिए हुए रहते हैं । "कुरु कुरु स्वाहा", "नेताजी कहिन", "हडताल हरिकथा", "रानी नागफनी की कहानी" प्रभृति उपन्यासों में हम यह देख सकते हैं । इसमें आनेवाले उद्धरण, काव्य-पंक्तियाँ, फिल्मी गीतों की लाइनें तथा कविता और साहित्य के सन्दर्भ भी व्यंग्यात्मक मुद्राओं से ओतप्रोत होते हैं । "नेताजी कहिन" में "सकल पदारथ या जग माहीं", "रहिमन सिट साइलेण्टली, वाचिंग वर्ल्डली वेज । बघटर-मण्ट व्हैन कम्स दैन मेकिंग नेबरडिलेज ", "चोर चतुर बरमार नट प्रभुप्रिय मँडुआ भण्ड, सब भच्छक परमार्थी कलि सुपन्थ पाखण्डा", "मयङम मय हम सब जग जानी", अरे बुलबुलों को हसरत है कि उल्लू न हुए", "आज हमरे इयार की सादी हय"[53] आदि पंक्तियाँ पढ़ते ही हास्य-व्यंग्य की एक लहर दौड पडती है ।

"राग दरबारी" उपन्यास में भी ऐसी अनेक पंक्तियाँ मिलती हैं । रंगनाथ के बिगड़े हुए स्वास्थ्य पर व्यंग्य करने के लिए लेखक तुलसीदास का सहारा लेते हैं -- "नवकंज लोचन कंजमुख करकंज पदकंजारुणम्" ।[54] प्रिंसिपल साहब मास्टर खन्ना को डाँटकर कमरे से एकदम निकल जाते हैं जिसकी व्यंग्यात्मक अभिव्यक्ति के लिए लेखक ने "मैं पानी जैसा आया था औ" आँधी जैसा जाता हूँ ।"[55] का प्रयोग किया है । कुछ दिन हुए, बद्री पहलवान ने शिवपालगंज से दस मील आगे एक दूसरे गाँव में आटाचक्की की मशीन लगायी थी । वैद्यजी के विरोधी और आलोचक रामाधीन भीखमखेड़वी ने इस जनभावनाको अपनी अमर कविता में इस प्रकार व्यक्त किया है -- "क्या करिश्मा है ए रामाधीन भीखमखेड़वी,

खोलने कालिज चले आटे की चक्की खुल गई ।"[56]

उसी प्रकार "मेले-ठेले में तो मुँह खोलके सिन्नी बाँटी,

ससुरको देख के घूंघट खींचा मीटर भर ।[57]

बेला पर लिखे रुप्पनबाबू के पत्रमें फिल्मी पंक्तियाँ इफ़रात से मिलती हैं -- "मुझे अपने गल्ले लगा लो, ओ मेरे हमराही" और "ये मेरा प्रेमपत्र पढ़कर, कि तुम नाराज़ न हो कि तुम्मेरि जिन्दगी, हो, कि तुम्मेरि बन्दगी हो ।"[58] ऐंचाताना परशाद नामक एक नेता की आँखों के सम्बन्ध में ये पंक्तियाँ --

"उधर देखती है, इधर देखती हैं,

न जाने किधर से, किधर देखती हैं ।"[59]

"कुरु कुरु स्वाहा" में तो साहित्य और कविता के ऐसे कई सन्दर्भ मिलते हैं । आधुनिक प्रयोगवादी कविता पर व्यंग्य करते हुए लेखक ने उपन्यास के नायक जोशीजी की कविता के कुछ उदाहरण भी प्रस्तुत किए हैं । जोशीजी

ने दो-चार पाश्चात्य काव्य संग्रह पढ़े, आप्टे का अंग्रेजी-संस्कृत कोश उल्टा पुल्टा और फिर जूझने लगे काव्य की रचना - प्रक्रिया से -- §!§ "अब हविष्य, केवल भविष्य, काल्पनिक इष्य शिशु - आँखों का ।"[60] §2§ "अन्तिम प्रहर, अन्तिम लहर गिनता कहाँ, उस आखिरी चट्आन पर, कहीं वह जो नहीं था मैं ? कब गया, कैसे गया, और क्या गया था सोचकर ! सहस्त्र फनधर, उस लहर को देखता अफसोस कर - कहीं वह तो नहीं था मैं ?"[61] एक नव-रहस्यवादी रचना देखिए - "अनदेखे अनजान किसी बाण से बिंधा, जल - समाधि पा गया था वह ? या कि यह भी एक क्रीड़ा थी, मेरे मन-पाखी की ?"[62] इसी रहस्यवादी दौर में अन्ततः उन्होंने सीधे परमपिता को सम्बोधित कुछ कविताएँ लिखी जो संदर्भ धर्मवीर भारती हो सकती थी लेकिन जिन्हें जोशीजी संदर्भ जॉन डॉन की अंतिम कविताए और सूरदास की आरम्भिक कविताएँ बता रहे थे -- "न मंत्र है, न यंत्र, बस तितीक्षा है । टूटे हुए अक्षत, बस प्रतीक्षा है, प्रभु आयें, यहाँ बैठें कथा-भर सुन सकूँ वरदान की ।"[63] जोशीजी की इस काव्य-कथा में पलीता लगाने के लिए "मैं" भी एक तुकबन्दी छेड देता है - "प्रभु । उस वस्त्र को क्या कहते हैं, जो बहुत-बेहद छोटा हैं, फिर भी ढक लेता है मम पूर्णमिद ? वत्स वह तो लंगोटा हैं ।"[64] हिमांशु श्रीवास्तव के उपन्यास "कथा-सूर्य की नयी यात्रा" में कविश्री तिकड़म किशोर एक महान बुद्धिवादी कवि हैं । लोग उन्हें हिन्दी के इलियट कहते हैं ।[65] उनकी कविता में इमेज, भावसंधान लय, बिंब §!§ आदि देखिए -- ओ / मेरी, / पोर्थिया, चौंको मत / इंडियन पोर्शिया ••• / जब हम / शाम के एक / धुं / ध 2 लके में ••••/

मिले थे एक गन्दे तालाब के किनारे । / एक अलसेशियन की इंडियन प्रेमिका / ने एक साथ जन्म दिये थे, / तीन श्वान - छौनों को / मैंने देखा था, तेरी·· · ··/ एस-कलर पुतलियों को ·····/ तेरे नायलॉन की साडी से ग··· ·/ तैरती प्रीत-गंध -- / ने मुझसे कहा, करूँ कामना / तुम्हें माँ बनाने की । / मेरी अव्यक्त, दमित कामना को / तुमने और भी दबाया था / बर्थ-कंट्रोल और एबॉरशन को रेकमेन्ड कर / एतदर्थ, हम ही एक-दूसरे को भोगेंगे --- / देहयष्टि का रस सोखने को है, सोखेंगे, सोखेंगें, सोखेंगे ·······।"[66]

इसी उपन्यास में नागार्जुन की एक कविता "कालिदास के प्रति" की कुछ पंक्तियाँ - कालिदास सच सच बताना, पक्ष रोये या तुम रोये थे -- का सन्दर्भ एक व्यंग्य-कथा के रूप में मिलता है । चूँकि अंग्रेजी-ज्ञान के बिना कोई बड़ा साहित्यकार नहीं हो सकता, कालिदास ने अंग्रेजी के ज्ञान के लिए अपनी पत्नी विद्योत्तमा से छिपाकर अंग्रेजी का एक शिक्षक रखा था । उसकी फीस के लिए कालिदास ने विद्योत्तमा का हार चुराया और भेद खुलने पर पत्नी द्वारा प्रताड़ित होकर एक पहाड़ी पर चले गये जहाँ उन्होंने अमर काव्य ग्रंथ "मेघदूत" की रचना की । वस्तुत: वहाँ मेघदूत का नायक नहीं रोया था, स्वयं कालिदास रोये थे ।[67]

व्यंग्य की सृष्टि के लिए कई बार एक ही लेखक एक ही उपन्यास में एकाधिक भाषा शैलियों का प्रयोग करता है । नीचे कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं ।

§1§ "आप आयुष्यमान खलीक के स्वास्थ्य के सम्बनध में चिंतित थे, अतएव सोचा कि आपको सूचित कर दूँ कि वह उसी वरार्थिनी सौभाग्यकांक्षिणी स्वर-साधिका का पाणिग्रहण करके पुन: अवतरित हुआ है । इस उपलक्ष्य में सायं-स्मरणीय बंग-बन्धु पूर्वेन्दु ने कुक्कुट-पुच्छिकाओं का आयोजन किया हैं । आप अविलम्ब बंग-बंधु निवास पहुँचने का कष्ट करें ।" §कुरु कुरु स्वाहा, पृ॰ 41§

§2§ "पूर्वेन्दु ने आग्रह होने पर बताया कि इस फिल्मि का थीम : एक गाँव जो उजड़ गिये, एक सहर जो बसे नहीं । इस पर किसीने खुलकर दाद दी और किसीने दबी जबान से जोड़ी, "अब्बास की दुम" । शायद यह फिकरा पूर्वेन्दु को सूनायी दे गया क्योंकि उन्होंने यह बताना जरूरी समझा कि सत्यजितराय ने स्क्रिप्ट का "हायप्रेज" किया है । इस पर एक बंगाली पटकथा लेखक ने कहा कि सत्यजित बाबू जिनगी भर आउर कुछ नेई किया, सिरीफ ऋत्विक का नकल । उन्होंने फतवा दिया कि सत्यजित एसेंशियली सेंटिमेंटल आउर जेमी सेंटिमेंटाल शे ग्रेट आर्टिस्ट होने सकता नहीं । x x x एक अदद अवार्ड - विनिंग पंजाबी फिल्म बना चुका एक नवयुवक इस सत्यजित चर्चा से उखड़ गया । उसने पहले सत्यजितराय को उनकी कद-काठी के अनुरूप एक लम्बी-चौड़ी गाली दी और फिर उन बंगालियों श्राध्य करने लगा, जिन्होंने "आर्टका ठेका लिया हुआ है और इण्डस्ट्री में गन्द फैलायी हुई है ।" इस पर पंजाबी माफिया और बंगाल माफिया में ले--दे हुई, उ॰ पी॰ माफियाने बीच - बचाव किया । xxx शांति स्थापित होते ही खलीक मियां बगैर किसी सन्दर्भ के लता मंगेशकर को कोसना शुरू किया और

जानना चाहा कि वह खलीक-सुन्दरी के लिए सिंहासन खाली करने में इतनी देर क्यों कर रही है ? इससे ऊ॰ पी॰ से आये एक लता - भक्त स्वरकार उखड़ गये । उन्होंने प्रथम लता - वन्दना की और अनन्तर यह रहस्योद्घाटन किया कि लताजी का वायु-विमोचन तक कतिपय मिरासिनों की औलाद के गायन से अधिक सुरीला होता है । मित्रवरने इतना और जोड़ा -- "और सुवासित भी" । खलीक मरने - मारने पर उतर आये । ऊ॰ पी॰ माफिया के इस गृह युद्ध में पंजाब-बंगाल माफियाने बीच-बचाव किया । पिटते हुए मित्रवर यही कहते रहे, "मारो भार्या - बान्धवो मारो अंत में तो देवाधिदेव तुम सबको मारेंगे ही ।" §कुरु कुरु स्वाहा : पृ॰ 43-44§

§3§ "मनोहर के लिए वह केवल मरता हुआ आदमी था, जो मरने से पहले कुछ-पूजाऽपाठ कराना चाहता था । एक मरता हुआ आदमी जिसका एक हाथ हिलता ही जा रहा था रे । जिसके एक ओर को गये - से ओंठ, घड़ी-घड़ी फड़क रहे थे रे । जिसके इन फड़कते ओठों की सीध में गाल की एक मांस-पेशी तड़प - तड़प जा रही थे रे । और जो "यं-, रं-, लं-, वं" ऐसा कुछ बोल रहा था रे, जिसे मनोहर समझना चाहता था मगर समझ नहीं पा रहा था रे ।" §कुरु कुरु स्वाहा : पृ॰ 194 §

उपर्युक्त उदाहरणों में प्रथम मित्रवर नामक एक पात्र का कथन है । मित्रवर अतिशुद्ध संस्कृत निष्ठ हिन्दी बोलते हैं । दूसरे में बम्बई के फिल्मी परिवेश की एक पार्टी का गाली-गलौज व्यक्त हुआ है । तीसरे में "यं - रं - लं - वं" नामक एक मरणासन्न पात्र की भाषा की नकल उतारी गई है ।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि व्यंग्यात्मक उपन्यासों की भाषिक - संरचना उसके रूपबन्ध के अनुरूप व्यंग्यात्मकता लिए हुए रहती है । अब इसी सन्दर्भ में इन उपन्यासों में प्रयुक्त व्यंग्यात्मक प्रतीक, व्यंग्यात्मक नये उपमान, व्यंग्यात्मक रूपक, व्यंग्यात्मक मुहावरे और व्यंग्योक्तियोंकी चर्चा करेंगे ।

व्यंग्यात्मक प्रतीक :-

व्यंग्यात्मक उपन्यासों के प्रतीक भी व्यंग्यात्मक होते हैं । कुछ उपन्यासों के तो शीर्षक ही प्रतीकात्मक हैं । "राग दरबारी" स्वाधीनता के उपरांत हमारे देश में पनपी-जनमी उस प्रवृत्ति का प्रतीक है जिसमें सारे मूल्य धराशायी हो गए हैं । "अहो रूपम्, अहो ध्वनि" का यह राग संपूर्ण देश में आलापा जा रहा है । "कथा-सूर्य की नयी यात्रा" में कथा-सूर्य प्रेमचन्द के लिए आया है । उसके पात्रों, स्थलों, पत्रिकाओं, संस्थाओं के नाम भी प्रतीकात्मक हैं -- नभदीप, शक्टार, साहित्यकेतु, लंगटेश बहादुर, झंझटेश, तिकडम किशोर, खंखोटन भगत, चटंप्रसाद धूर्तराज एण्ड सन्स, आचार्य शंखधर, विचित्र हिन्दी विश्वविद्यालय, त्र्यंबक जटाधर, त्रिनेत्र सुखठनकर, चंचल चाणक्य, नवरंग , द्विविधा, बेसुरे सुरभारती, अंधकारजी, निष्पक्ष भायतीय हिन्दी-शोध कमण्डल, प्रतिकार, चन्द्रचकोर बेपनाह होटल, बीमार लफन्दरपुरी आदि आदि । उपर्युक्त सभी पात्र साहित्यिक गुटबन्दी तथा फिल्मी-माहौल के यथार्थ पात्रों के प्रतिक-रूप में आये हैं । इन नामों के पीछे लेखक का दृष्टिकोण मखौल उड़ाने का है ।

"एक चूहे की मौत" में चूहा फाइल एवं उस उबाऊ विरसता को जीनेवाले क्लर्क दोनों का प्रतीक है । ऐसा काम करनेवाले सभी चूहे हैं । चूहों की तरह उनका भी कोई महत्व नहीं, कोई व्यक्तित्व नहीं । वैसे लेखकने कई स्थानों पर उसके लिए "चूहेमार" शब्द का भी प्रयोग किया है । हेडक्लर्क लिए "बड़ा चूहेमार" और सुपरवाइज़र के लिए "चूहेखाना का मुहाफिज" जैसे शब्द प्रयुक्त हुए हैं ।

"जंगल तंत्रम्" में सिंह, मोर, नाग और चूहा क्रमश: राजनेता, प्रशासक, पूंजीपति एवं आम आदमी का प्रतीक बनकर आये हैं । प्रतिदिन - प्रतिक्षण अपने स्वार्थों के लिए रंग बदलनेवाले बुद्धिजीवी वर्ग के लिए लेखक ने गिरगिट के प्रतीक को लिया है । इस उपन्यासमें अन्य कई व्यंग्यात्मक प्रतीक-रूप शब्दों का प्रयोग हुआ है । जंगलतंत्रम्, मोरभाषा, जंगलवाणी, मंगलवाद, जंगलीकरण, जंगल सुरक्षा कानून, जंगलिस्तान, जंगल - सुरक्षा-कोष जैसे शब्द क्रमश: लोकतंत्र, अंग्रेजी, आकाशवाणी, समाजवाद, राष्ट्रीयकरण, राष्ट्र सुरक्षा कानून (नेशनल सिक्यूरिटी अेक्ट), पाकिस्तान, राष्ट्र-सुरक्षा-कोष के लिए प्रयुक्त हुए हैं ।

"मुरदाघर" उपन्यास के अंत में मैना का पति पोपट रेल से कटकर मर जाता है । उसका शव "मुरदाघर" में रखा गया है । मैना उसे लेने के लिए वहाँ जाती है । अत: इस दृष्टि से उसके शीर्षक की सार्थकता है । किन्तु वस्तुत: यह गन्दी, घिनौनी बस्ती ही मुरदाघर है । पोपट, मैना, जब्बार जैसे अनेक लोगों के सपने यहाँ रात-दिन मरते रहते हैं, अत: यह बस्ती उनके सपनों का भी मुरदाघर है ।

गयादीन की लड़की "राग दरबारी" में बेला के प्रसंग में गरमायी हुई भैंस का प्रतीक बड़ा सटीक है । जिस प्रकार भैंस खूंटे के आसपास चक्कर काट रही है और तरह-तरह की आवाजें निकाल रही है उसी प्रकार बेला भी अब कुंआरी स्थितियों को भोगने-झेलने के लिए अधिक तैयार नहीं है । उसे भी एक प्रेमी की फ़ौरन ज़रूरत है । उपन्यास के अंतमें डुगडुगी बजानेवाले मदारी का प्रतीक भी व्यंग्यात्मक हैं ।

"गोबर-गणेश" का विनायक गरीब वर्ग का एक प्रतिभाशाली युवक है । पृष्ठ 339 पर वह कहता है कि "होरी मेरा बाप है, धनिया मेरी माँ" अत: लेखक उसे गोबर कहता है । वह भी गोबर की भांति व्यवस्था के खिलाफ आवाज़ उठाता है, किन्तु अन्ततोगत्वा वह भी होरी की भांति घुटने टेक देता है । यह विनायक - गोबर गणेश अपने देश के गरीब वर्ग के चेतना संपन्न मानस का प्रतीक है ।

"महाभोज" उपन्यास का शीर्षक ही प्रतीकात्मक है दा साहब, सुकूल बाबू, डी•आई•जी• सिन्हा साहब, पत्रकार दत्ता साहब आदि सभी बिसू की मौतका अपने पक्षमें उपयोग करते हैं । किसीको बिसूकी मौत का दु:ख नहीं है । मानो ये सब गिद्ध हैं, बिसू की मौत उनके लिए "महाभोज" का प्रसंग है ।

तात्पर्य यह कि व्यंग्यात्मक उपन्यासों के प्रतीक भी उनकी प्रकृति के अनुरूप होते हैं ।

नये व्यंग्यात्मक उपमान :

व्यंग्यात्मक उपन्यासों में उपमानों का चुनाव भी लक्ष्य को केन्द्र में रखकर किया जाता है । नीचे कतिपय ऐसे उपमानों की सूचि दी जा रही है :-

उपमेय	उपमान	उपन्यास	पृ.संख्या
:1: शहर का आदमी :	सुअर का लेंड :	राग दरबारी	364
:2: नौकरीयापद में लगा हुआ आदमी :	गोह :	वही:	130
:3: बात :	बताशा :	वही:	150
:4: वर्तमान शिक्षा पद्धति :	रास्ते में पडी हुई कुतिया :	वही:	15
:5: मुनक्का :	बकरी की लेंडी :	वही:	233
:6: लंगोट की पट्टी :	हाथी की सूँड :	वही:	302
:7: लीडरी :	ऐसा बीज जो अपने घरसे दूर की जमीन में पनपता है :	वही:	390
:8: उरोज :	गले के नीचे दो उँचे - उँचे पहाड :	वही:	153
:9: क्रांति:	दुम हिलाती कुतिया :	वही:	175
:10: गाली :	आत्माभिव्यक्तिका जनप्रिय तरीका :	वही:	93
:11: गुटबन्दी :	परात्मानुभूति की चरमदशा :	वही:	117
:12: जनता :	घास कूडा	वही:	374
:13: चुटिया :	आसमानी बिजली गिरने से शरीर की रक्षा करने वाली वस्तु :	वही:	121
:14: दरख्वास्त :	चींटी की जान :	वही:	49
:15: नैतिकता :	कोने मे पड़ी हुई चौकी :	वही:	129

	उपमेय	उपमान	उपन्यास	पृ•संख्या
:16:	पंचायत घरकी	कार्तिकी कुतिया :	राग दरबारी	341
:17:	पान की दूकान :	थूक उत्पादन में वृद्धि करनेवाला साधन :	वही:	393
:18:	फिल्मी गानेकी बैचैनी :	गरम भैंस की चीख पुकार :	वही:	376
:19:	बहादुर :	जो बैल को दुहकर लाता है :	वही:	226
:20:	देहाती बच्चा :	धूल, कीचड़, लार, काजल और थूक का बण्डल :	वही:	336
:21:	शाम की हवा :	गर्भवती स्त्री :	वही:	16
:22:	सूर्य :	काल चक्र का सफेदपोश सिपाही :	किस्सा नर्मदाबेन गंगूबाई	16
:23:	शील :	नैतिकता की दीवार :	वही:	14
:24:	वीर्य :	काम-वासना के फोडों कापीव :	वही:	18
:25:	रूपयों से खरीदा मर्द :	किराये का सूट :	वही:	92
:26:	योनि :	सौन्दर्य और सौष्ठव का शतदल :	वही:	17
:27:	मौसमी कवि :	गरमियों के खटमल :	वही:	2
:28:	बाजारू औरत :	मालगाडी :	वही:	19
:29:	प्यार :	महज एक इण्टरव्यू जिसमें परीक्षा कोई दे पास कोई और हो :	वही:	56
:30:	नर्मदाबेन सेठानी का प्यार :	शानदार लोन में खेली जानेवाली टैनिस :	वही:	27
:31:	एक ही कविता को कई बार पढनेवाले सम्मेलनी कवि :	दो-चार नुस्खो पर चलनेवाली लिमिटेड कंपनी :	वही:	42

	उपमेय	उपमान	उपन्यास	पृ॰संख्या
:32:	कहानी का छोर :	किस्से का नाड़ा :	किस्सा नर्मदाबेन गंगूबाई	31
:33:	मदमस्त पत्नी :	फ्रण्टीयर मेल :	वही:	19
:34:	छुट भैये साहित्यिकार :	साहित्यिक सी॰आइ॰डी॰ :	कथा-सूर्य की नयी यात्रा	121
:35:	आलोचक :	साहित्य का इन्सपेक्टर :	वही:	13
:36:	प्रेमपत्र :	विटामिन "ए" के	वही:	103
:37:	प्रतिभा :	ग्रामोफोन के रेकार्ड की आवाज :	वही:	12
:38:	प्यार :	तेज धारवाला चाकू :	दिल एक सादा कागज	200
:39:	एक निवाला खाना:	एक चूल्लू पसीना :	वही:	106
:40:	अंधेरा :	रफफन + जैदी विला :	वही:	197
:41:	पुरुषेन्द्रिय :	बिल में घुसनेवाला साँप :	वही:	83
:42:	आवारा गर्दी करना :	सरकारी साडंकी तरह चारों और फसलों को मुँह मारना :	धरती धन न अपना	9
:43:	हट्टा-कट्टा आदमी :	सांड :	वही:	37
:44:	लड़ाई का बढ़ना :	घास में लगी आग का भड़कना :	वही:	94
:45:	परायी स्त्री :	मुँहजोर घोडा :	वही:	109
:46:	धर्म :	अफीम का नशा :	वही:	130
:47:	छातियाँ :	कच्चे खरबूजे :	वही:	157
:48:	छातियों का हिलना :	कटोरे में पडे पानी का हल कोरे खाना :	वही:	157
:49:	महराज की जांघ :	बेलन :	इमरतिया	11
:50:	साधु-सन्यासी :	सांड :	वही:	72

	उपमेय	उपमान	उपन्यास	पृ॰ संख्या
:51:	दिमाग :	चकला :	इमरतिया	21
:52:	हिन्दू-जाति :	गाय :	वही:	121
:53:	निंदा करना :	राह-बिराह टट्टी करना :	सूखता हुआ तालाब	4
:54:	परीक्षा में फेल होना :	लोटनिया खाना :	वही:	26
:55:	निर्भीक व्यक्ति :	अगिया बैलल :	वही:	42
:56:	मोटर :	लोहे का हाथी :	आधा गाँव	71
:57:	खूबसूरत और सोंधी स्त्री :	बिल्कुल ताज़ा ताज़ा गुड :	वही:	56
:58:	कच्ची उम्रकी सालियाँ :	कदम्ब की शाखे :	वही:	59
:59:	वर्णसंकर प्रजा :	कलमी लड़के - लड़कियाँ	वही:	18
:60:	हिप्पी :	शिव की बारात के गण :	कृष्णकली	140
:61:	भीड़ :	एकान्त का अवसान :	वही:	298
:62:	बढ़ता रक्तचाप :	हृदयहीन शत्रु	वही:	47
:63:	प्रेमकी दुरूह बाराखड़ी :	चीनी वर्णाक्षरी :	वही:	23
:64:	तस्कर व्यापार :	सोने के अण्डे देनेवाली मुर्गियों का व्यापार :	वही:	71
:65:	तन्वंगी हल्की स्त्री:	कपास का फूल :	वही:	158
:66:	कमर :	बेंत का लचीला धनुष :	वही:	67
:67:	सुदूरवर्ती प्रदेश :	प्रांत का मनचाहा कुंभीपाक :	वही:	90
:68:	ऐसेम्बली का उटपटाँग प्रश्न :	विष बुझा घातक वाण :	वही:	123

उपमेय	उपमान	उपन्यास	पृ॰संख्या
:69: उरोज :	गले के नीचे का वर्गाकार प्लेटो :	अठारह सूरज के पौधे	68
:70: इन्द्र धनुष :	बरसाती केंचुओ का शरीर :	वही:	105
:71: बच्चे का जन्म लेना:	तेज मरकरीका जल जाना :	वही:	49
:72: चुम्बन :	संग मरमर के धब्बे बनाना :	वही:	168
:73: चेहरा :	कुबड़ा प्रश्नवाचक चिह्न :	वही:	120
:74: स्मृतियाँ :	फ्लेश बैक का चेहरा :	वही:	102
:75: आँख :	सपनों की खोली :	वही:	61
:76: पत्नी :	प्लेट फार्म का टिकट :	वही:	102
:77: सांची का स्तूप :	हड्डियो को रखने के लिए बनाया गया सन्दूक :	वही:	94
:78: उरोज :	घोंसले में सोये बन्द आँख बच्चे :	बैसाखियों वाली इमारतें :	84
:79: खयाल :	खूबसूरत पंछी :	वही:	48
:80: प्रेम :	जीभ पर उगा कैंसर :	वही:	2
:81: प्रेम :	बेहद गरम देश में जमायी गयी आइसक्रीम	वही:	24
:82: प्रेम:	चुइंग गम :	वही:	32
:83: याद :	बीमार कुतिया :	वही:	117
:84: गली :	एक बहुत बड़ा उगालदान :	अन्धेरे बन्द कमरे	481
:85: जवान लडकी :	डेढ गज की घोड़ी :	वही:	481
:86: चुंबन :	होठों का ओटोग्राफ :	वही:	273

	उपमेय	उपमान	उपन्यास	पृ॰संख्या
:87:	अध्यापन :	दो मंजिला मकान बनाने का साधन :	अंतराल	36
:88:	इमानदारी :	प्रेत :	प्रेत	26
:89:	नयी कोठी :	अक्षत यौवना :	एक कहानी अन्तहीन	81
:90:	कर्मकांडी ब्राहमण :	नैमिषारण्य के स्नातक :	कुरु कुरु स्वाहा	14
:91:	बहनचोद :	भगिनी भंजक :	वही:	28
:92:	कच्छा बनियान :	नेशनल ड्रेस :	वही:	37
:93:	पार्टी देनेवाले लोग :	सायं स्मरणीय :	वही:	41
:94:	साले :	भार्या बान्धव :	वही:	44
:95:	शीघ्र समाप्त होनेवाला संभोग :	बायलौजी की होम्योपैथिक डोज़ :	वही:	82
:96:	भारतीय :	जमीन पर हगनेवाले :	वही:	87
:97:	साम्यवादी :	बगैर नापका रूसी टोपा पहनने वाला अहमक :	वही:	138
:98:	नेता :	जनता से आसनाई करनेवाला प्रान्त :	नेताजी कहिन	68
:99:	चरणसिंह :	जिल्ला लबवल गिल्ली डण्डा पिलियर ॥प्लेयर॥ :	वही:	91
:100:	बहुगुणा :	बहुधन्धी आल राउन्डर :	वही:	91
:101:	कुशल राजनीतिज्ञ :	प्रोफेशनल खिलाड़ी :	वही:	91

व्यंग्यात्मक रूपक :-

व्यंग्यात्मक उपमानों की भाँति व्यंग्यात्मक उपन्यासों में आनेवाले रूपक भी व्यंग्य-ध्वनि से संस्कृत होते हैं । नीचे ऐसे व्यंग्यात्मक रूपकों की एक सूची देने का प्रयास किया गया है :-

क्रम	रूपक	उपन्यास	पृ॰संख्या
:1:	देहात का महासागर :	राग दरबारी	9
:2:	बात के बता से :	वही:"	150
:3:	गालियों का मोल :	वही:	360
:4:	अंग्रेजी की खिडकी :	वही:	90
:5:	अतीत के पडाव :	किस्सा नर्मदाबेन गंगूबाई	10
:6:	कामयाबी की फ्रंटरयर :	वही:	15
:7:	वैधव्य का सांप :	वही:	85
:8:	दिनों के कबूतर :	वही:	12
:9:	माया की दया :	वही:	19
:10:	दर्द की मेंहदी :	वही:	44
:11:	अदाओं का मल्हम :	वही:	19
:12:	इश्के के सूरज :	दिल एक सादा कागज	137
:13:	मध्यवर्गीय मूल्यों की वैसाखी :	वही:	173
:14:	तल्खी का मैल :	वही:	134
:15:	तनख्वाह की तराजू :	वही:	185
:16:	संगीत के विटेमिंज :	वही:	98
:17:	कल्पनाओं का यूटोपिया :	कृष्णकली	21
:18:	कटाक्ष का मेग्नेट :	वही:	22
:19:	हंसी का घातक प्रहार :	वही:	83
:20:	प्रश्न-तलवार कावार :	वही:	222
:21:	मिल्क ऑफ ह्यूमन	वही:	217

क्रम	रूपक	उपन्यास	पृ. संख्या
:22:	सरप्राइज़ का तोहफ़ा :	कृष्ण कली	137
:23:	हनीमून की हज :	वही:	210
:24:	यौवन का उत्कोच :	वही:	214
:25:	खाँसी का सिग्नल :	वही:	121
:26:	दृष्टि की सर्च लाइट :	वही:	226
:27:	अतीत के हवाई अड्डे :	अठारह सूरज के पौधे	121
:28:	बदन का कटपीस :	वही:	104
:29:	सोच की काई :	अंतराल	60
:30:	संगीत का डाज :	अँधेरे बन्द कमरे	331
:31:	घमंड का धुआँ :	इमरतिया :	20
:32:	हाजमा की मशीनरी :	वही:	83
:33:	झूठ की चासनी :	उग्र तारा	56
:34:	फिक्र की चर्बी :	वही:	45
:35:	मुसकान की बुकनी :	वही:	11
:36:	कानून की लाठी :	एक चूहे की मौत :	70
:37:	अध्यात्मवाद की चट्टान :	एक पंखड़ीकी तेजधार	166
:38:	सोशलिज्म की रेत :	वही:	166
:39:	मस्तिष्क के पाँव :	प्रेत	27
:40:	आत्मप्रशंसा का महासागर :	शहीद और शोहदे	11
:41:	नौकरशाही की धूप :	वही:	53
:42:	आकांक्षा के आकाश :	कुरु कुरु स्वाहा	14
:43:	जिम्मे-जीनियस :	वही:	27
:44:	भावुकता के ऊँचे वाल्टेज :	वही:	50
:45:	कमलाक्षी के दिव्य कटाक्ष :	वही:	81
:46:	मीडिओक्रिटी की दलदल :	वही:	281

क्रम	रूपक	उपन्यास	पृ॰संख्या
:47:	साहित्य का इन्सपेक्टर :	कथा-सूर्य की नयी यात्रा	13
:48:	बिंब का लक्कड़दादा :	वही:	55
:49:	साहित्य का नवनीतवाद	वही:	87
:50:	यादों का बस्ता :	धरती धन न अपना	16
:51:	विरोध के द्वीप :	सीमाएँ टूटती है	152

व्यंग्यात्मक विशेषण :-

व्यंग्यात्मक उपमान और रूपक की भाँति इन उपन्यासों में व्यंग्यात्मक विशेषण भी मिलते हैं —

मरखन्ना बैल, नृशास्त्रीय बहस, हत्याभिलाषी ट्रक, चिरैयामूतन बौछार, अबकाश प्राप्त ब्रुश, लुचलुचाया व्यक्ति,[68] खनकती हुई आवाज़, मौलसरी के पेड़ पर चढ़ी हुई दोपहर, ठुकी-ठुकायी प्रगतिशील लड़की, इम्पोटेड लड़कियाँ, जरूरतों के खूँटोंसे बन्धी हुई ज़िन्दगी, मुस्तफिल खिलंडापान, आबस्ट्रैक्ट शायरी, इन्टेलेक्चुअल औरतें, चुटकी नींद, ढाईनी लड़ाई,[69] मौसमी कवि, अंगड़इयाँ भरी गालियाँ, लावारिस जवानी, वहमी क्षण, पौरूषेय सौन्दर्य, निर्बन्ध भावुकता,[70] नर्म कर्टसी, ललमुदी जाति, बिगडैल घोडे, काला चाँद, भुवन मोहिनी हँसी, कचूपिड गढन, दक्षकलाइयाँ, अनुसन्धानी दृष्टि, काल्पनिक चटखारे, हड्डीतोड़ झटके, बचकानी हिस्टिरिकल चीखें, वेरी ओरिजिनल आइज़, मारात्मक साड़ी, अवांछित कौमार्य, मुखरा सड़क, फोटोजेनिक चेहरा, रोमाण्टिक गोतखोरी, निद्रान्ध सुन्दरी, प्रात: स्मरणीय लोटा धारी ग्रामीण, महानाटकीय सिसकियाँ, जोगिया थैला, काल्पनिक

करताल, उदासीन ग्रीवा,[71] घिनौना डर, मूर्खतापूर्ण मुस्कुराहट,[72] दहीं की तरह कसी हुई उम्र, शबनमी टिप्पणीयाँ,[73] साहित्यिक आसफालन, सम्पादकीय स्टंट,[74] परिभाषाहीनमय, शुतुरमुर्गी व्यक्ति,[75] नींबू टिकाऊ मूछे, औलियों के से अन्दाज, बेकिनार शून्य,[76] लड़कियाना चेहरा, ठण्डी फुरसत, ऐयाश अन्दाज, गुलमहोरी शरीर, कुआरा सुख, बियाबान निर्लिप्तता, आवारा मन:स्थिति, बुजुर्ग हवाएँ, मरा हुआ वाक्य,[77] जनखा राजनीति,[78] एक मुँहा रूख, छिनाल पुरूष, बातुनी होंठ,[79] बोस सेक्रेटरी नुमा जोड़ें, लेखक शक्ल विद्यार्थी,[80] किरू लयवल साहित्त, फ्रण्डर अटमासफ्रीअर, चैतन्य चूर्ण धोल, अक्स्पोर्ट क्वाल्टी, राजनीतिक क्रिकेट,[81] पालटिकल नादानी, शहीदाना इटेलेक्चुअलता, करण दीवान मार्का "पापी पपीहा" आवाज़, इटैलेक्चुअल सिनिसिज्म, परतीकात्मक उपयोग, सायं-स्मरणीय बंग बधु, लखनवी डायलोगबाजी, इडियेटिक टिप्पणी, मैथुनोत्तर उदासी, सूडो बिरादरी, सिनेमाई हीरो, गैर - सवालिया निगाह, अश्लील मूँगफली इटैलेक्चुअल जायण्ट,[82] निक्कर पुराण, वलियाटिक भावुकता

<u>व्यंग्यात्मक कहावतें और मुहावरे :-</u>

व्यंग्यात्मक उपन्यासों में आनेवाली कहावतें और मुहावरे भी अधिकांशत : व्यंग्यात्मक होते हैं । कुछ कहावतें और मुहावरे तो लेखक द्वारा नये ढंग से गढ़े हुए होते है ।

व्यंग्यात्मक कहावतें की सूची

क्रम	कहावत	उपन्यास	पृ॰संख्या
:1:	हाथी का लेंड भी किचन्टला होता है :	राग दरबारी	380
:2:	जिस किसीकी दुम उठाकर देखो मादा ही नजर आता है :	वही:	400
:3:	वर्तमान शिक्षा पद्धति रास्ते में पड़ी हुई कुतिया है :	वही:	15
:4:	गिलहरी के सर पर महुआ चू पडे तो समझेगी, गाज गिरी है :	वही:	357
:5:	अखाड़े का लतमरूआ भी पहलवान होता है :	वही:	195
:6:	इधर से आग खाओगे तो उधर से अंगारे निकालोगे :	वही:	149
:7:	कल के जोगी । चूतड तक जटा :	वही:	355
:8:	गाय ही चली गई तो पगहे का क्या अफसोस?:	वही:	316
:9:	गू खाय तो हाथी का ना खाय :	वही:	249-50
:10:	जइस पसु तइस बधना :	वही:	187
:11:	देह पर नहीं लत्ता, पान खाये कलकत्ता :	वही:	257
:12:	मास्तर होकर मार खाने से कहाँ तक डरोगे?:	वही:	324
:13:	यह जांघ खोलो तो लाज, वह जांघ खोलो तो लाज :	वही:	95
:14:	सोलह सौ सुअरों को निमंत्रण देते घूम रहे हैं और स्थान-विशेष में पाखाना तक नहीं है :	वही:	227
:15:	सुअर का-सा लेंड न लिपने के काम आये न जलाने के :	वही:	364

क्रम	कहावत	उपन्यास	पृ• संख्या
:16:	बीस लड़कों के बाप को बताना कि औरत चीज़ होती है :	राग दरबारी	342
:17:	माशूकों के तीन नाम : राजा, बाबू पहलवान	वही:	261
:18:	अतीत का काटा पानी नहीं माँगता :	आगामी अतीत	50
:19:	नफ्स की भूख से पेट की भूख बड़ी होती है :	अन्धेरे बन्द कमरे	20
:20:	विपत्ति कनखजूरे की भाँति सैंकड़ों पैरों से चलकर आती है :	कृष्ण कली	84
:21:	आप मंगन्ते बामना द्वार खड़े जजमान :	वही:	119
:22:	आप डुबन्ते बामना ले डूबे जजमान :	वही:	207
:23:	आव-गाँव के खा गये, घर के माँगे भीख :	वही:	160
:24:	दाल-भात में मूसरचंद :	कृष्ण कली	66
:25:	बदन का कँवारापन सौन्दर्य की तौहीन है :	दिल एक सादा कागज	174
:26:	हाथी दांत का बटन दिखाने से हाथी को कोई समझ नही सकता :	कथा नर्मदाबेन गंगूबाई	आमुख से
:27:	लौंडो की यारी, गदहे की सवारी :	कुरू कुरू स्वाहा	14
:28:	कौन है जो नहीं है हाजतमन्द :	वही:	125
:29:	राम-मिलायी जोड़ी, एक अन्धा एक कोढ़ी :	वही:	26
:30:	गदहे, प्रेमी, जासूस और मछेरा का धैर्य ही धन है :	वही:	40
:31:	ब्रेविटी इज़ दा सोल ऑफ वर्शिप :	वही:	198
:32:	अपना ढेंढर कोई देखता नहीं, दूसरे की फुल्ली देखने सब चले आते है :	अलग अलग वैतरणी	583

क्रम	कहावत	उपन्यास	पृ॰संख्या
:33:	अण्डा सिखलाये बच्चे को कि चें चें मत करना :	नदी फिर बहचली	177
:34:	ऐसे गायब हुए जैसे गधे के सिर से सींग :	धरती धन न अपना	66
:35:	चोरो के चोर यार जाटों के जाट यार :	वही:	276
:36:	पराये तेल से कुल का दीपक नहीं जलता :	वही:	123
:37:	टोकरी से गिरे हुए बेरों की तरह अभी कुछ नहीं बिगडा है :	वही:	274
:38:	बन्दा बन्दे का दारू है :	वही:	44
:39:	मर्द तो मिट्टी का भी जोरावर होता है :	वही:	243
:40:	खडी का पूत सौदागर का घोड़ा जो कर ले सो ही थोड़ा :	वही:	25
:41:	ओस चाटने से कहीं प्यास बुझती है :	कथा-सूर्य की नयी यात्रा	65
:42:	पढ़ो बेटा चण्डिका कि जिसमें चढ़े हण्डिका :	वही:	82
:43:	काला अच्छर भैंस बराबर, चढ़िके पढ़े सुजान :	जुलूस	81
:44:	चूड़ा की गवाही दहीं से देना :	वही:	67
:45:	जब संग में जाल तो मछली का क्या अकाल :	वही:	37
:46:	धन धरावे तीन नाम -धन्नू, धनुआ, धने सरराम :	वही:	42
:47:	हाजी भी बन गये और चोर भी पकड़ लिया :	वही:	90
:48:	चूहे की घर में गेहूँ होगा तो क्या वह पूडी बनाकर खायेगा :	अलग अलग वैतरणी	71

क्रम	कहावत	उपन्यास	पृ॰संख्या
:49:	पुजैया के बकरे को भी कनहल की माला पहनायी जाती है :	अलग अलग वैतरणी	136
:50:	भेडिये की दुम पकड़कर बाहर आना अच्छा नहीं :	वही:	123
:51:	घोड़े की पिछाड़ी और अफसर की अगाड़ी से हमेशा डरना चाहिए :	एक चूहे की मौत	112
:52:	हाथी कीचड़ में फंस जाता है तो उस पर कुत्ते भी भोंकते हैं :	शहीद और शोहदे	151
:53:	नौकरी तो ताड़ की छाहँ है :	नदी फिर बह चली	230
:54:	मयङममय हम सब जग जानी :	नेताजी कहिन	70
:55:	तसलुवा तोर के मोर :	वही:	56
:56:	साझे की खेती तो गदहा भी नहीं चरता :	सबहिं नचावत राम गोसाई	13

व्यंग्यात्मक मुहावरों की सूची

क्रम	मुहावरा	उपन्यास	पृ॰संख्या
:1:	चे गैन दालों की दाल गला :	नेताजी कहिन	9
:2:	मामला टिचन होना :	वही:	11
:3:	सही सइटिंग करना :	वही:	17
:4:	कुर्सिका चूं-चूँ चरमर होना :	वही:	33
:5:	किर्र लयवल होना	वही:	53
:6:	राजनीत का परमानण्ट बारहवां खिलाडी होना :	वही:	91
:7:	बायोग्राफ़ी बनाना :	वही:	163
:8:	नैमिषारण्य के स्नातक होना :	कुरू कुरू स्वाहा	14
:9:	रचनाधर्मिता का मोटर डाउन कर रखना :	वही:	36

क्रम	मुहावरा	उपन्यास	पृ•संख्या
:10:	फ्री-फण्ड में सड़क नापना :	वही:	36
:11:	वायु-विमोचन तक सुरीला होना :	वही:	44
:12:	कब्ज की फिक्र करते-करते हाजमा बिगाड लेना :	वही:	45
:13:	गुड वोमिटिंग कहना :	वही:	48
:14:	कापी-राइट मार लेना :	वही:	50
:15:	नर्वसाय जाना :	वही:	83
:16:	शाट में मंगल बुध डालना "कैमरा नितंबो पर घुमाना"	वही:	86
:17:	थर्ड पाकेट में हाथ डालना :	वही:	100
:18:	कान महोत्सव के लिए फिल्में बनाना :	वही:	100
:19:	तंत्र के पेटिकोट में घुसना :	वही:	115
:20:	किसी का प्रश्नोपनिषद् हो जाना (निरंतर प्रश्न पूछते जाना)	वही:	147
:21:	किसी का आत्मचरितात्मक हो जाना :	वही:	148
:22:	यं - शं - लं - वं वाली बोली बोलना :	वही:	194
:23:	मामला "जोलीगुड" होली गुड हो जाना" :	वही:	112
:24:	साहित्य का इन्सपेक्टर होना :	कथा-सूर्य की नयी यात्रा	13
:25:	लापता पुस्तकालयकी पुस्तक :	वही:	14
:26:	फ्लैप देखकर फतवा देना :	वही:	15
:27:	हलदी बोल देना :	वही:	19
:28:	साहित्यमें नवनीतवाद फैलाना :	वही:	89
:29:	आँखो को बढ़िया चश्मा मिल जाना:	वही:	132
:30:	नामका ताड़ के पेड़ पर नाचना :	वही:	149

क्रम	मुहावरा	उपन्यास	पृ॰संख्या
:31:	अन्धेरे - उजेले में :	राग दरबारी	72
:32:	नमक से नमक खाना :	वही:	103
:33:	गार्ड ऑफ ओनर {पाखाना करती औरतों का किसीको देखकर खड़ा हो जाना}	वही:	246
:34:	पेशाब उतर आना :	वही:	107
:35:	उड़दकी दाल खाना :	वही:	130
:36:	बात के बतासे फोडना :	वही:	150
:37:	सींक की आड़ का रहना :	वही:	210
:38:	पेशाब बन्द कर देना :	वही:	107
:39:	पिशाब में चिराग जलना :	वही:	235
:40:	मेंढक को झुकाम होना :	वही:	103
:41:	जवानी पर पिल्ले मूतना :	वही:	304
:42:	युधिष्ठिर का बाप बनना :	वही:	363
:43:	भैंस का गरम होना :	वही:	381
:44:	भरत-मिलाप करा देना :	वही:	384
:45:	राशन घी की तरह लगना :	धरती धन न अपना	37
:46:	हवाई फैर करना :	वही:	53
:47:	अपनी खाट के नीचे झांककर देखना :	वही:	85
:48:	नसबार के लिएभी आग न होना :	वही:	118
:49:	लंगोट का पक्का होना :	वही:	147
:50:	कान-रस होना :	वही:	201
:51:	चारा दिखाकर दोह लेना :	वही:	159
:52:	अंगलियों पर खून लगा कर शहीद बनना :	शहीद और शोहदे	56
:53:	अपना अपनी चमड़ी बचाने की फ़िक्र में रहना :	वही:	100
:54:	बालू पर नक्शे बनाना :	वही:	109

क्रम	मुहावरा	उपन्यास	पृ॰संख्या
:55:	बुद्धिका जहाज :	जुलूस	91
:56:	तेरह वी विद्या :	वही:	97
:57:	आँखों के इंचीटेपसेनापना :	वही:	83
:58:	पेट में दाढी होना :	कृष्ण कली	123
:59:	मंत्रियोंवाला "हो जायगा" कहना :	वही:	184
:60:	शेर की खाल में लिपटा हुआ गीदड़ :	वही:	208
:61:	वस्त्राभावे पुष्पम :	वही:	139
:62:	जीभ को जिमनेस्टिक करवाना :	वही:	189
:63:	हनिमुनिया जाना :	वही:	212
:64:	प्रभाव का चेक भुनाना :	वही:	135
:65:	टाट - बाहर करना :	आधा गाँव	253
:66:	कच्छ कच्छ जन्नत दे	वही:	12
:67:	कलमी लडके लड़कियाँ :	वही:	18
:68:	घड़ों पानी पड़ जाना :	वही:	19
:69:	कबाब की हड्डी:	वही:	95
:70:	खबर गरम होना :	वही:	162
:71:	तुर्की - ब - तुर्की जवाब देना :	वही:	253
:72:	हड्डी अच्छी होना :	वही:	334
:73:	सातवाँ रत्न बने नौ-दस दिन हो जाना :	एक पखेड़ी की तेज धार	37
:74:	बिना किताब देखे डस्ट कवर पर मर मिटना :	दिल एक सादा कागज	78
:75:	जवान होने की खबर एक्सप्रेस डिलिवरी से मिलना :	वही:	90
:76:	किसी की ज्योग्राफी पर मर मिटना पर हिस्ट्री की खबर न होना :	वही:	167

क्रम	मुहावरा	उपन्यास	पृ॰संख्या
:77:	बातों के छिल के उतारना :	बैसाखियों वाली इमारतें	114
:78:	झूठ की चासनी देना :	उग्र तारा	54
:79:	आदि-मानव की सनातन भूमिका :	वही:	83
:80:	मलाई देख मुँह मारने लगना :	मित्रो मरजानी	25
:81:	बैठना :	नदी फिर बह चली	302

व्यंग्योक्तियाँ :-

उपन्यास जीवन का भाष्य है, अत: जीवन को उसके सही परिप्रेक्ष्य में समझाने के लिए उपन्यासकार अपने जीवनानुभवों के आधार बीच-बीच में सूत्र-रूप में कुछ सूक्तियाँ देता चलता है । यह सूक्तियाँ काव्य में अलंकार की भाँति स्वत: चली आती है । अन्य औपन्यासिक रूपबन्धों में जो महत्व सूक्तियों का है, वही महत्व व्यंग्यात्मक उपन्यासों में व्यंग्योक्तियों का है । इन व्यंग्योक्तियों की सृष्टि जीवन की विसंगतियों के कारण होती है । यद्यपि पूर्व - विवेचित अध्यायों में उदाहरणास्वरूप अनेक व्यंग्योक्तियों आयीं हैं, तथापि यहाँ कुछ उपन्यासों से ऐसी कतिपय व्यंग्योक्तियाँ प्रस्तुत की गई हैं :-

(1) "उनकी राय में ब्रहमचर्य न रखने से सबसे बड़ा हर्ष यह होता था कि आदमी बादमें चाहने पर भी ब्रहमचर्य का नाश करने लायक नहीं रह जाता था । संक्षेप में उनकी राय थी कि ब्रहमचर्य का नाश कर सकने के लिए ब्रहमचर्य का नाश न होने देना चाहिए ।"[83]

(2) जैसे भारतीयों की बुद्धि अंग्रेजी की खिड़की से झाँककर संसार का हालचाल लेती है, वैसे ही सनीचर की बुद्धि रंगनाथ की खिड़की से झाँकती हुई दिल्ली के हालचाल लेने लगी ।"[84]

(3) "गाँधी, जैसा कि कुछ लोगों को आप भी याद होगा, भारत वर्ष में ही पैदा हुए थे और उनके अस्थि-कलश के साथ ही उनके सिद्धान्तों को संगम में बहा देने के बाद यह तय किया गया था कि गाँधी की याद में अब पक्की इमारतें बनायी जायेंगी ।"[85]

(4) "प्रजातंत्र के बारे में उसने यहाँ एक नई बात सुनी थी, जिसका अर्थ यह था कि चूंकि चुनाव लड़नेवाले प्राय: घटिया आदमी होते है इसलिए एक नये घटिया आदमी द्वारा पुराने घटिया आदमीको, जिसके घटियापनको लोगों ने पहले से ही समझ-बूझ लिया है, उखाड़ना न चाहिए ।"[86] (प्रजातंत्र की यह थ्यौरी गजहों में गयादीनवाद कहलाती है ।)

(5) "गाँव के बाहर एक लम्बा-चौड़ा मैदान था जो धीरे-धीरे ऊसर बनता जा रहा था । अब उसमें घास तक नहीं उगती थी । उसे देखते ही लगता था, आचार्य विनोबाभावे को दान के रूप में देने के लिए यह आदर्श ज़मीन है ।"[87]

(6) वह जानता था कि हमारा देश भुनभुनानेवालों का देश है । दफ्तरों और दूकानों में, कल-कारखानों में, पार्कों और होटलों में, अखबारों में, कहानियों और अ-कहानियों में, चारों तरफ लोग भुनभुना रहे हैं । यही हमारी युग-चेतना है ।"[88]

§7§ "जिस गधे की पीठ पर सारे वेदों, उपनिषदों और पुराणों का बोझ लदा होता है, वह अंतराष्ट्रीय विद्युत परिषद का अध्यक्ष बन जाने के बावजुद मनुष्य नहीं हो जाता -- वह होने के लिए विद्वता का बोझा ढोने के सिवाय कुछ और भी करना होता है ।"[89]

§8§ "रामने क्या किया था ? सीता का त्याग किया था कि नहीं ? तभी हम आज तक रामराज्य की याद करते हैं । त्याग द्वारा भोग करना चाहिए; यही हमारा आदर्श है । "तेन त्यक्तेन भुंजीथा" -- कहा भी गया है ।"[90]

§9§ "पढ़कर आदमी पढ़े-लिखे लोगोंकी तरह बोलने लगता है । बात करनेका असली ढंग भूल जाता है ।"[91]

§10§ "उसने बेला के बारे में कुछ भी जानने से इनकार कर दिया और कहा कि लड़की पढ़ी-लिखी है तो अच्छा है और नहीं है तो बहुत अच्छा है, क्योंकि मुझे उससे मास्टरी नहीं करानी है; और लड़की सुन्दर है तो अच्छा है और नहीं है तो बहुत अच्छा है, क्योंकि मुझे उसे कोठे पर नहीं बैठाना है ।"[92]

§11§ "जो लाइन से नहीं लगता कक्का उस ससुरेकी ज़िन्दगी मार तमाम लाइनों में लगे रहने में बीत जाती है । कभी राशन की लाइन में लगे हैं, कभी दूधकी, कभी बसकी लाइन में लगे हैं, कभी खइराती दवाखाने की ! ससुर मरते हैं तो घरवालों को लकड़ी के लिए भी लाइन लगानी होती है ।"[93]

§12§ "आपके जमाने में काम सस्ते में होते थे लेकिन होते नहीं थे जिनके होनेकी गंजाइस हो । आज हर तरह के काम कराये जा सकते हैं । पइसा, अलबत्ता, पहले से बहुत ज्यादा लगता हय ।"[94]

(13) "जरूरी है यह सब नाटक भी राजनीत में। जइसे डाक्टर, वकील लोग तगड़ी असामियों से तगड़ी फीस बटोरने के साथ-साथ खइरातवाले खाते में भी कुछ काम करते रहते हैं, वइसे नेता को भी जनता-जनार्दन के लिए कुछ-न-कुछ करते रहना होता हय। इसीसे सोहरत मिलती हय, पब्लिकसिटी होती हय।"[95]

(14) "पहाड़िया का क्या हय, समय से पहले कहि गया ऊ सब। अभी खुले आम कहिनेका समय आया नहीं। थोड़ा भरम बना हुआ हय अबहूं इलह-बाद-कासी जइसे बयकपर्ड एर-याज में कि हिन्दी साहित्तकारों के के कउनो हस्ती हय। यह भरम साहित्तकार खुदे तोड़ देगा बहुत जल्दी।"[96]

(15) "प्रफेसनल अप्रोच रखे का चाही। जीतो या ड्रा करो, हारनेका काम नहीं। किर-किट हार-जीत के लिए हो रहा हम, जन-जन के मनोरंजन के लिए नहीं, एइसा जहाँ आपने समझा .वहाँ प्रफेसनल हुए। प्रफेसनल, सिचुएसन के डिमाण्डहि के अनुसार खेलता हय।"[97]

(16) "धन्धे व्यापार में सिफर न होते तो जानते कि औरत के मामले में छपी हुई कीमत की अहमियत नही, साथ में जो बारीक अक्षरों में लिखा होता है न कि स्थानीय टेक्स अतिरिक्त, वही भारी पड़ जाता है।"[98]

(17) "जब वह दर्शकों को पीठ दिये नाची, मैंने जोशीजी से कहा "मंगल-कुछ"। इसका सन्दर्भ यह था साहब कि इण्डस्ट्री के एक बुजुर्ग कैमरामैन हुआ करते थे जो हीरोइन का पीछे से शाट लेने से पहले डायरेक्टर से पूछ लेते थे "मंगल - बुध" कितना डालने का इसमें?" गोया कैमरा नितम्बों पर कितनी देर केन्द्रित रखना है?"[99]

{18} "जोशीजी उलझ लिये । "नहीं, आप कहना क्या चाहते हैं "
शैली में शुरू हो गया वाक्युद्ध । जोशीजी सहसा क्रान्तिकारी हो उठे ।
उनके साथ सही आनन्द है, संघी मिलें तो यह कम्युनिस्ट हो जायें,
कम्युनिस्ट मिलें तो ये संघी हो जायें । यह ससुर इनका "डिफरेंट"
होने का तरीका है ।"[100]

{19} "हम नंगे को तन ढकने के लिए कपड़ा दे सकते हैं, बशर्ते वह इतना
पीट चुका हो कि कपड़ों की एवज में बर्तन देनेवाली तक उसे न ले रही
हो । हम मूँगफली बाँटने के लिए दस लाख रुपया इकट्ठा कर सकते हैं,
बशर्ते उसमें से नौ लाख रुपया आपसमें ही बँट सकता हो । कभी सोचिए
कि यह कैसे हुआ कि उपनिषद्वाले हनुमान चालीसा के हो गये ।"[101]

{20} "समझ में आने और न आनेवाले अर्थों से उतने ही आलोड़ित जितने कि
किसी भी श्रेष्ठ कविता के शब्द ।"[102]

{21} "किसी प्रकार ऐसी कविता लिख डालो कि कोई उसका अर्थ ही न
लगा सके -- यहाँ तक कि अगर तुमसे भी कोई तुम्हारी कविता का अर्थ
पूछे, तो व्याख्या न कर सको ।"[103]

{22} "एक आंचलिक उपन्यास में लगभग एक सौ लोककथाएँ, दो सौ
क्विंवदन्तियाँ । हाँ, लोकगीत डेढ़ सौ से कम नहीं । स्थिति से लोकगीतों
की संगति बैठती हो, यह कोई आवश्यक नहीं है ।"[104]

{23} "खराब लिखो, खराब लिखो, खराब लिखो ..... घरका किराया
देना एक अच्छी नज़्मलिखने से ज्यादा बड़ा काम है । ..... पाठकों के
तारीफ़-भरे खत गर्म चाय की एक प्याली नहीं बन सकते । एक रुपये का
नोट नहीं बन सकते । ..... अच्छी कविताएँ और महान कहानियाँ लिखनेका

शौक चर्रायें तो शादी - ब्याह के चक्कर में न पड़ो । चाँद में रहनेवाली किसी लड़की से प्यार करो और किसी दफ़्तर में क्लर्की करो और जब तक जिया जाये जियो और साहित्य की सेवा करो और आटोग्राफ बाँटो और फिर एक दिन चुपचाप मरकर चन्दे से दफ़्न हो जाओ या जल जाओ ।"[105]

(24) "जहाँ गरीबी ज्यादा होती है वहाँ सपने भी ज्यादा होते हैं । और कवि तो सपनों के चींटे होते हैं । महक पर चले आते हैं ।"[106]

(25) "आप लोग जो काम पुलिस से नहीं करा पाते उसे करने के लिए हम लोगों को ही याद करते हैं -- हम लोग आपके दाहिने न सही बायें हाथ तो जरूर है । सोसायटी में हमारी भी एक जगह हैं ।"[107]

(26) "अरे, पुलिसवालों की दोस्ती ही बदमाशों से होती है, कोई शरीफ और नेक आदमी भला क्यों पुलिसवालों से दोस्ती करेगा ?"[108]

(27) "एक बार हो म में गयी ······ तो बन जाएंगी पूरी रंडी । कोई भी आएंगा ······ ले जाएंगा तेरे कू रुपया दे के । बेच देंगा ये लोग तेरे कू । उधर कागद पर लिख देंगा ····· तेरा भाई ले गया ····· तेरा बाप ले गया । समज गयी क्या ? ये लोग जो धाड़ मारता है तो कायके वास्ते मारता है ।"[109]

(28) "तुम लोग सोचता इस्मगलर के घरमें चोरी करेंगा तो वो पोलिस कू नई बालेंगा और पोलिस कुछ नहीं करेंगा । पन मैं सब लोक कू येई बोलता··· ···· किधर भी चोरी करना ····· पन इस्मगलर ···· दारूवाला····· रंडीवाला ···· इधर कभी भूल के भी नई जानेका । नई तो पोलिस जान ले डालेंगा मार-मार के । कभी नई छोडेंगा । कायकू ····· सारा पोलिस खाना इधर सेच चलता ।"[110]

(29) "तू यह अच्छी तरह जान ले यह दुनिया बनियों की है । जो जितना बड़ा बनिया है, वह उतना ही सम्मानित और शक्तिशाली है ।"[111]

(30) "पर मैं (गिलहरी) सच कहती हूँ कि युद्ध अब युद्ध नहीं होता । यह तो दो सिंहों (शासकों" के बीच का एक मजाक होता है, जिसमें मुझ जैसी अबलाओं के लाल मारे जाते हैं ।"[112]

(31) "अमरीका की एक दिगम्बर सुन्दरीने अपना अनुभव बताते हुए कहा कि दिगम्बरपन में लज्जा का अनुभव केवल चार मिनट रहता है । उस समय सभी तुम्हें घूरने लगते हैं । लेकिन पाँचवे मिनट में यह अनुभव होने लगता है कि उन्हें घूरने के लिए कुछ नहीं रह गया ।"[113]

नि ष्क र्ष

अध्याय का समग्रावलोकन करने पर निष्कर्षत: निम्नलिखित तथ्य कहे जा सकते है :-

:1: व्यंग्यात्मक उपन्यासों के शिल्प एवं भाषिक-संरचना व्यंग्यात्मक तेवर लिए हुए रहते हैं ।

:2: इनमें शिल्प के नये आयाम जैसे - फन्टासी, पूर्वदीप्ति, शब्दसहस्मृति, कथा की बहुस्तरीयता प्रभृति मिलते हैं ।

:3: इनमें आनेवाली प्रासंगिक कथाएं हास्य-व्यंग्य-संपन्न होती है । वे व्यंग्यात्मक पृष्ठभूमि एवं परिवेश के निर्माण में विशेष रूप से सहाय होती हैं ।

:4: इनमें भाषाभिव्यंजना उपलब्ध होती है ।

:5: इन उपन्यासों में प्रयुक्त प्रतीक, उपमान, रूपक, विशेषण, कहावतें और मुहावरे भी अधिकांशतः व्यंग्यात्मक-मुद्रा से युक्त होते हैं । उपन्यास की समूची भाषिक-संरचना ही व्यंग्यात्मकता के गुणों से परिपूर्ण होती है ।

. . . . .

सन्दर्भ

:1: The Concise Oxford Dictionary : P. 429.

:2: दृष्टव्य : व्यंग्य के मुलभूत प्रश्न : पृ॰ 75 ।

:3: "रानी नागफनी की कहानी" : भूमिका ।

:4: "व्यंग्य के मूलभूत प्रश्न" : पृ॰ 75 ।

:5: "फन्टासी" का एक नाम "काल्पनिका" भी है । दृष्टव्य : "व्यंग्य के मूलभूत प्रश्न" : पृ॰ 75 ।

:6: "कक" : संयुक्त विशेषांक, मई-जून, : प॰ 43 ।

:7: "टेराकोटा" : पृ॰ 8 ।

:8: वही: पृ॰ 3 ।

:9: "कुरु कुरु स्वाहा" : पृ॰ 179 ।

:10: "नेताजी कहिन" : पृ॰ 54-55 ।

:11: "कथा-सूर्य की नयी यात्रा" : पृ॰ 15

:12: वही: पृ॰ 15-16 ।

:13: वही: पृ॰ 16 ।

:14: "राग दरबारी" : पृ॰ 129 ।

:15: वही: पृ॰ 107 ।

:16: वही: : पृ॰ 69 ।

:17: वही: : पृ॰ 349 ।

:18: "नेताजी कहिन" : पृ॰ 53-54 ।

:19: वही: पृ॰ 91 ।

:20: वही: पृ॰ 12-13 ।

:21: वही: पृ॰ 174 ।

:22: "हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यास" : पृ॰ 422 ।

:23: इमरतिया : पृ॰ 28 ।

:24: वही: पृ॰ 28 ।

:25: वही: पृ॰ 27 ।

:26: "जुलूस" : पृ० 84 ।

:27: इमरतिया : पृ० 107-108 ।

:28: "मुरदाघर" : पृ० 37

:29: "हिन्दी उपन्यास : सामाजिक चेतना" : पृ० 203 ।

:30: "कुरु कुरु स्वाहा" : पृ० 74-75 ।

:31: "नदी फिर बह चली" : पृ० 128-129 ।

:32: "राग दरबारी" : पृ० 72 ।

:33: वही : पृ० 73-74 ।

:34: वही: पृ० 74 ।

:35: वही: पृ० 70 ।

:36: वही: पृ० 262-271 ।

:37:
:38: वही: पृ० 186 ।
:39:
:40:

:41: नेताजी कहिन : पृ० 56 ।

:42: वही: पृ० 105 ।

:43: "राग दरबारी" : पृ० 402 ।

:44: वही : पृ० 364 ।

:45: वही: पृ० 364 ।

:46: वही: पृ० 355 ।

:47: "कुरु कुरु स्वाहा" : पृ० क्रमशः 9,9,9-10,10,38, 38, 99, 125 ।

:48: वही: पृ० क्रमशः 12, 24, 24, 26, 26, 26, 28, 41, 41, 57, 71, 130 ।

:49: वही: पृ० क्रमशः 12, 15, 27, 51, 53, 71, 83,98,112, 150, 179,

:50: नेताजी कहिन : पृ० क्रमशः 17, 25, 25, 26, 31, 31, 44, 44, 53, 52• 55• 56• 65• 65• 70• 74, 82, 91, 91, 91, 92, 105 ।

:51: वही: पृ. 13,22,31,52,105 ।

:52: वही: पृ. 25, 31, 51, 53, 55, 65, 72 ।

:53: वही: पृ. क्रमश: 21,62,73,70,83,106 ।

:54: "राग दरबारी" : पृ. 10 ।

:55: वही: पृ. 55 ।

:56: वही: पृ. 60 ।

:57: वही: पृ. 141 ।

:58: वही: पृ. 212 ।

:59: वही: पृ. 333 ।

:60:
:61:
:62:
:63:
:64: "कुरु कुरु स्वाहा" : पृ. 64 ।

:65: "कथा-सूर्य की नयी यात्रा" : पृ. 52 ।

:66: वही: पृ. 54 ।

:67: वही: पृ. 13-14 ।

:68: "राग दरबारी" : पृ. 172,318, 338,349,397,420 ।

:69: "दिल एक सादा कागज" : पृ. 57, 83, 95,96,142,149, 167,193,234,238 ।

:70: "किस्सा नर्मदाबेन गंगूबाई" : पृ. 1,8,9,10,14,93 ।

:71: कृष्णकली" : पृ. 10, 20, 39, 38, 42, 71, 82, 84, 93, 94,100, 118, 123, 154, 160, 165, 176, 182, 180, 203, 205, 206, 206 ।

:72: "एक पंखुड़ी की तेज धार" : पृ. 13, 106 ।

:73: "कांचघर" : पृ. 26, 70 ।

:74: "कथा-सूर्य की नयी यात्रा" : पृ. 9, 94 ।

:75: "शहीद और शोहदे" :पृ. 33, 141 ।

:76: "शहर में घूमता आईना" :पृ॰ 78, 108, 387 ।

:77: "बैसाखियोंवाली इमारते" : पृ॰ 2, 17, 40, 72, 72, 98, 10,
109, 128 ।

:78: "अल टूटता हुआ" : पृ॰ 384 ।

:79: "उग्रतारा" : 13, 18, 36 ।

:80: "अंतराल" : पृ॰ 15, 25 ।

:81: "नेताजी कहिन" : पृ॰ 53, 44,73, 53, 91, 21 ।

:82: "कुरु कुरु स्वाहा" : पृ॰ 15,16,21,33,41,51,64,
80, 90, 125, 143, 154, 173, 194,
138, 150 ।

:83: "राग दरबारी" : पृ॰ 41 ।

:84: वही: पृ॰ 90 ।

:85: वही: पृ॰ 131 ।

:86: वही: पृ॰ 178 ।

:87: वही: पृ॰ 187 ।

:88: वही: पृ॰ 214 ।

:89: वही: पृ॰ 310 ।

:90: वही: पृ॰ 367 ।

:91: वही: पृ॰ 155 ।

:92: वही: पृ॰ 380 ।

:93: नेताजी कहिन : पृ॰ 10-11

:94: वही: पृ॰ 11 ।

:95: वही: पृ॰ 18 ।

:86: वही: पृ॰ 55 (राजस्थान के भू॰पू॰ मुख्य मंत्री पहाड़ियाने साहित्यकारों के सम्बन्ध में कुछ अनुचित कहा था वह सन्दर्भ) ।

:97: वही: पृ. 91 ।

:98: "कुरु कुरु स्वाहा" : पृ. 18 ।

:99: वही: पृ. 86 ।

:100: वही: पृ. 178 ।

:101: वही: पृ. 180 ।

:102: वही: पृ. 197 ।

:103: "कथा-सूर्य की नयी यात्रा" : पृ. 36 ।

:104: वही: पृ. 66 ।

:105: "दिल एक सादा कागज़" : पृ. 80 ।

:106: वही: पृ. 158 ।

:107: "सबहि नचावत राम गोसाईं" : पृ. 150 :
(गृहमंत्री के समक्ष एक गुण्डे का कथन)

:108: वही: पृ. 137 ।

:109: "मुर्दाघर" : पृ. 112 ।

:110: वही: पृ. 179 ।

:111: "जंगलतंत्रम्" : पृ. 26 ।

:112: वही: पृ. 93 ।

:113: "हड़ताल हरिकथा" : पृ. 31 ।

. . . . .